संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

॥ ऋषि प्रसाद ॥

हिन्दी

वर्षः ९

अंकः ७६

अप्रैल १९९९

जग में जीवन श्रेष्ठ वही, जो फूलों-सा मुस्काता है।
अपने गुण सौरभ से जग के, कण-कण को महकाता है ॥

- पूज्यापाद संत श्री आसारामजी बापू

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ७६
९ अप्रैल १९९९

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

इस अंक में

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।
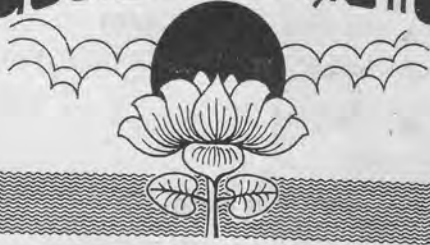
मांगल्य का द्वार

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

**सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु ।
सर्वसद्बुद्धिमाप्नोतु सर्व सर्वस्तु नन्दतु ॥**

हम सब अपने-अपने संकीर्ण दुर्गों से, संकीर्ण स्वार्थों से तर जायें, बाहर आ जायें। मानवता का, देवत्व का और ब्रह्मत्व का विकास करें। हम सब एक-दूसरे के अन्दर छुपे हुए मंगलमय स्वरूप को देखकर ही व्यवहार करें। हम सर्वत्र मंगलमय ही देखें। हम अमंगल ढूँढ़ते रहेंगे तो अपना अंतःकरण ही अमंगल हो जायेगा और मंगलमय देखेंगे तो अपना अंतःकरण शान्ति, माधुर्य और मांगल्य से छलकने लग जायेगा।

जो दूसरों की ऊँचाई देखकर जलते रहते हैं, जो दूसरों की सुख-सुविधा देखकर अशांत होते रहते हैं उनको मानसिक आधि होती है और मानसिक आधि की पकड़ में जो आते हैं वे शारीरिक व्याधि के शिकार हो जाते हैं।

आगे वेद भगवान कहते हैं :

हम सबको सद्बुद्धि प्राप्त हो। बुद्धि तो हम लोगों के पास है, वकीलों-नेताओं के पास भी है। पेट भरने की बुद्धि तो भाई ! मच्छर के पास भी है। बच्चे को जन्म देने की बुद्धि तो खटमल के पास भी है। दुःख आये तो भाग जाने की, भयभीत हो जाने की बुद्धि अन्य जीव-जन्तुओं के पास भी है। बुद्धि तो प्राप्त है, किन्तु हमें सद्बुद्धि प्राप्त हो। उस सत्य स्वरूप को, शाश्वत स्वरूप को, नित्य जीवन को, नित्य आनंद को, शाश्वत शांति को प्राप्त करनेवाली बुद्धि हमें प्राप्त हो।

सर्वसर्वस्तु नन्दतु । हम सब एक-दूसरे के अच्छे कार्यों में सहायक बनें। भलाई के काम मिल-जुलकर करें। ईश्वर के रास्ते जाने के दिव्य कार्य में हम एक-दूसरे के मददगार हों। **'बहुजनहिताय बहुजनसुखाय'** के कार्यों में हम एक-दूसरे के पोषक हों। मानवता के नाते सत्कर्म करने में हम अपना हृदय विशाल रखें।

होता क्या है कि अपने व्यक्ति की गलती बड़ी नहीं दिखती है और पराये की भलाई बड़ी नहीं दिखती है। लेकिन यह 'अपना' और 'पराया' देह को 'मैं' मानने से होता है। अगर आत्मा को 'मैं' मानोगे तो यह अपने-पराये की दीवाल धराशायी हो जायेगी, राग-द्वेष क्षीण हो जायेगा और जो तुम्हारे स्वाभाविक आत्मा का अमृतमय खजाना है वह प्रगट होने लगेगा।

हमारे शास्त्रों ने तो यहाँ तक कहा है कि युक्तियुक्त वचन अगर बालक भी कहता है तो उसे शिरोधार्य करना चाहिए और युक्ति के विपरीत ब्रह्माजी भी कह दें तो उनकी बात को छोड़ देना चाहिए। सत्य का कितना आदर है सनातन धर्म में ! अन्य जगहों पर तो कहा है, लिखा है कि : 'मान लो, यकीन कर लो।' लेकिन गीता कहती है : **परिप्रश्नेन सेवया: ।** परिप्रश्न करो। मानवीय अधिकार, जिज्ञासा के अधिकार, बुद्धि के विकास के अधिकार जो सनातन धर्म में दिये गये हैं - ऐसे अधिकार शायद कहीं नहीं मिलते।

हम बुद्धि की शरण जायें लेकिन बुद्धि कैसी ? सद्बुद्धि की शरण- जो सत्य का अनुभव करा दे।

वास्तव में सत्य और आप दो चीज नहीं हैं। सत्य आपसे दूर नहीं है, परमात्मा आपसे दूर नहीं है, रब आपसे दूर नहीं है, पराया नहीं है। रब कहो, सत्य कहो, सनातन शांति कहो - वह आपका अपना निज स्वरूप है। लेकिन असत्य शरीर को, असत्य देह को, असत्य पदार्थों को, असत्य उपाधियों को असत् मति ने इतना मूल्य दिया है कि पग-पग पर सत्य का घात हो जाता है।

गाँधीजी कहा करते थे :

''सत्य ही ईश्वर है।''

नानकजी ने कहा है :

आद सत्। जुगात सत्।
है भी सत्। नानक होसे भी सत्।

यह शरीर आदि में नहीं था, युगों पूर्व यह शरीर नहीं था, बाद में भी नहीं रहेगा और अभी भी हर पल 'नहीं' के तरफ ही जा रहा है... लेकिन यह शरीर जिसकी सत्ता से चलता है वह अकाल पुरुष, वह रब तो शरीर से पहले भी था, अभी भी है और बाद में भी रहेगा। दो घण्टे पहले शरीर के जो कोष थे उनमें से कितने ही नष्ट हो गये और नये बन गये। सामने थाली में भोजन है लेकिन खा लिया तो 'मैं' बन गया। कल के 'मैं' का हिस्सा कितना ही बदल गया। उस सत्य की सत्ता, उस वास्तविक 'मैं' की सत्ता जब इस स्थूल शरीर में घुलामिला देते हैं तो आदमी भोगी बनता है, अतृप्त बनता है, अशान्त बनता है, क्रूर-कुटिल बनता है। उस वास्तविक सत्य की 'मैं' को जब सूक्ष्म शरीर में मिला देते हैं और अपने सूक्ष्म शरीर में ही यदि आदमी की आसक्ति होती है तो वह अपनी ही बात पर अड़ा रहता है लेकिन सद्बुद्धि प्राप्त हो जाये तो 'एक यह मेरा शरीर है' ऐसी भ्रांति चली जायेगी। 'मेरे मन में जो आया वही होना चाहिए' ऐसा दुराग्रह चला जायेगा। फिर तो,

मेरो चिन्त्यो होत नाहीं, हरि को चिन्त्यो होय।
हरि चिन्त्यो हरि करें, मैं रहूँ निश्चिंत॥

फिर आप निश्चिन्त होकर संकल्प करेंगे, प्रवृत्ति करेंगे और समष्टि आपको सहयोग करेगी। अगर समष्टि के सिद्धान्त के अनुकूल होगा तो आपको कर्म करने का आनंद आयेगा, उत्साह आयेगा और प्रतिकूल होगा या आपका मनमाना नहीं भी हुआ तो आपको क्षोभ नहीं होगा, अशान्ति नहीं होगी।

प्राकृतिक जीवन जीना यह समय गँवाना नहीं, अपितु समय सार्थक करना है। कभी-कभी बगीचे की सैर करना, नदी तट पर जाना, नौका-विहार करना, कभी बच्चों के साथ बच्चे होकर आनंद-विनोद करना - यह तो जीवन के फूल को महकाना है।

जब हम प्रकृति के, सत्य के और ईश्वर के आड़े खड़े हो जाते हैं, तभी अशान्ति होती है, तभी दुःख होता है, तभी परेशानी होती है। नानकजी सत्य के साथ घुलमिलकर रहते थे।

तेरा भाणा मीठा लागे।
जो तिद् भावे सो भलीकार।
तू सदा सलामत निरंकार।

वह परमात्मा सदा सलामत है किन्तु आपकी मति और आपके विचार, आपका तन और मन सदा सलामत नहीं है। दस मिनट के बाद आपके मन में कौन-सा विचार उठेगा उसका आपको पता नहीं और जितने भी विचार उठते हैं उनमें से कई विचार तो आपको याद रहते हैं और कई उठ-उठकर चले जाते हैं। लेकिन विचार नहीं उठे थे तब भी जो था, विचार उठे तब भी जो है और विचार

जो सुविधाओं का उपयोग करता है वह स्वस्थ रहता है और जो सुविधाओं का उपभोग करता है वह रोगी हो जाता है और अशान्त रहता है।

चले गये तब भी जो रहा वह विचारों का मूल उद्‌गमस्थान, वह साक्षी ज्यों-का-त्यों है । उस देखनेवाले को देखने के लिए जो योग्य बन जाये वह सन्मति है। वह सन्मति सत्कर्मों से पुष्ट होती है, सत्य स्वरूप के ध्यान-जप से पुष्ट होती है, सत्पुरुषों का संग करने से पुष्ट होती है ।

अगर आपके चित्त में दुःखाकार वृत्ति नहीं बनती है तो बाहर की विपरीत परिस्थितियों की कोई कीमत नहीं। अगर आपके चित्त में सुखाकार वृत्ति नहीं बनती है तो बाहर की अनुकूल परिस्थितियों की भी कोई कीमत नहीं।

अतः अपने-अपने कर्म से उस आत्मदेव की उपासना करो, उस परमेश्वर के प्रसाद को प्राप्त करो जिस प्रसाद से सारे दुःख सदा के लिए दूर हो जाते हैं।

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥

उस परब्रह्म के प्रसाद से सारे दुःख निवृत्त हो जाते हैं । अगर आपके चित्त में दुःखाकार वृत्ति नहीं बनती है तो बाहर की विपरीत परिस्थितियों की कोई कीमत नहीं। अगर आपके चित्त में सुखाकार वृत्ति नहीं बनती है तो बाहर की अनुकूल परिस्थितियों की भी कोई कीमत नहीं। कितनी भी अनुकूल परिस्थितियाँ हों लेकिन आपके हृदय में अतृप्ति और अशांति हो तो फिर धन किस काम का और आपकी वाहवाही किस काम की ? जैसे, रोकफेलर ।

रोकफेलर पुरुषार्थी था, बड़ा उद्योगपति था । इक्कीस साल की उम्र में तो उसने कई मिलियन डॉलर कमा लिये थे । एक मिलियन डॉलर अर्थात् आज के आठ करोड़ रूपये । उसने थोड़े-से ही समय में अपना व्यापार इतना बढ़ाया, पैसों के पीछे इतनी अन्धी दौड़ लगायी कि महाराज ! पैसा ही परमेश्वर हो गया ।

व्यक्ति अपना पुरुषार्थ जब चल चीजों के पीछे लगाता है तो भगवान भी चल रूप में ही मिलते हैं। अपना पौरुष अगर भोग में लगाता है तो भगवान भोग के रूप में मिलते हैं और अगर अपना पुरुषार्थ भगवान के वास्तविक स्वरूप को जानने में लगाता है तो भगवान वास्तविक स्वरूप में प्रगट होते हैं।

रोकफेलर ने लगाया अपना पुरुषार्थ और बहुत बड़ी 'स्टेन्डर्ड वैक्यूम कंपनी' का मालिक हो गया। जब वह ५०-५२ वर्ष का हुआ तो 'संपत्ति क्षीण न हो जाये... नौकर धोखा न दे दें... कहीं डाका न पड़ जाये...' आदि बातों का उसे दिन-रात खटका रहने लगा। शरीर तो सुविधाओं में था किन्तु मन में शान्ति नहीं थी । शान्ति देनेवाला सत्संग और भारतीय संस्कृति का प्रसाद देनेवाले कोई संत उसके जीवन में नहीं थे । अब तो रात की नींद हराम हो गयी और दिन का चैन खो गया। ५३ वर्ष की उम्र में तो घुल-घुलकर अस्थिपंजर मात्र रह गया। वह डॉक्टर पर डॉक्टर बदलने लगा। हकीम-डॉक्टर सब इलाज बता-बताकर जाते किन्तु किसीसे ठीक नहीं हो रहा था। आखिर में डॉक्टरों ने कहा : ''मिस्टर रोकफेलर ! अगर इसी धन और पद के पीछे आप लगे रहेंगे तो आप छः महीने

सबके अंतःकरण में सद्बुद्धि-कुबुद्धि दोनों छुपी हैं। यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम किसको जगाते हैं ? अगर हम सुमति विकसित करने के रास्ते पर चलें तो हम मानव में से महामानव बन सकते हैं और महामानव में से महेश्वर तत्त्व को पाकर, आत्मा-परमात्मा का साक्षात्कार करके जीवन्मुक्त हो सकते हैं।

से अधिक नहीं जी सकेंगे । हमें क्षमा करना।''

उस रोकफेलर का एक समझदार साथी था। उसे जब इस बात का पता चला तो उसने दो हजार डॉलर में एक नाव खरीदी और कुछ ही दिनों में वह नाव चलाना सीख गया । एक दिन उसने रोकफ़ेलर से कहा : ''चलो मेरे साथ, थोड़ी देर नाव पर सैर कर आयें।''

रोकफेलर ने जवाब दिया : ''यह क्या ! मेरे पास समय नहीं है गँवाने का।''

अपने-अपने कर्म से उस आत्मदेव की उपासना करो, उस परमेश्वर के प्रसाद को प्राप्त करो जिस प्रसाद से सारे दुःख सदा के लिए दूर हो जाते हैं।

रोकफेलर को पता ही नहीं था कि प्राकृतिक जीवन जीना कोई समय गँवाना नहीं, अपितु समय सार्थक करना है । कभी-कभी बगीचे की सैर करना, नदी तट पर जाना, नौका-विहार करना, कभी बच्चों के साथ बच्चे होकर आनंद-विनोद करना- यह तो जीवन के फूल को महकाना है। लेकिन वह तो जीवन के फूल को धन के पीछे इतना तपा चुका था कि वह फूल ही मुरझाने लगा।

मित्र ने हठ किया : ''कुछ भी हो जाये, आपको मेरे साथ चलना पड़ेगा, नहीं तो मैं खाना नहीं खाऊँगा।''

मित्र के आग्रहवश रोकफेलर तैयार हो गया नौका-विहार करने के लिए। नाव पर बैठने के बाद रोकफेलर बार-बार घड़ी देखता था और मन में सोचता जाता था कि 'समय व्यर्थ जा रहा है...' लेकिन धीरे-धीरे मित्र की बातों के प्रभाव से रोकफेलर के जीवन में कुछ समझ आयी : 'मैं और मेरा परिवार' इस संकीर्ण वृत्त में मैं घूमता हूँ उसीसे चिन्ता, तनाव और अशान्ति आ जाती है।

इस वृत्त को विशाल करते जाओ, व्यापक करते जाओ। ईश्वर ने आपको बहुत-से उपहार दिये हैं लेकिन उन उपहारों से दब मरने के लिए आपका जीवन नहीं है वरन् उन उपहारों का सदुपयोग करके परम उपहाररूप परमात्मशांति पाने के लिए आपका जीवन है। इन उपहारों को उस प्यारे की संतानों के हित में लगाओ।

रोकफेलर धन चले जाने की चिन्ता में चूर हो रहा था कि, 'नौकर दगा न दे दें... फलाना डिपार्टमेंट ठीक चल रहा है कि नहीं...' इन चिन्ताओं-दुश्चिन्ताओं में ठीक से भोजन भी नहीं कर सकता था। यदि दो ग्रास ज्यादा खा लिए तो पचा नहीं सकता था।

यह भी कोई धनवान् की निशानी है ? विदेश में आज के धनवानों की पहचान क्या है ? अगर ४५-५० वर्ष का धनवान् है तो उसे कोई बड़ी बीमारी जैसे हार्ट अटैक, ब्लड प्रेशर, डायबिटीज, अनिद्रा आदि होनी चाहिए। आज के धनवानों का यही परिचय है !

ईसाइयत कहती है कि सूई की नोंक से ऊँट गुजर सकता है लेकिन धनवान् व्यक्ति ईश्वर के दरबार से नहीं गुजर सकता। किन्तु हिन्दू संस्कृति कुछ ऊँचाई की बात करती है कि धनवान् व्यक्ति के पास अगर सद्बुद्धि है तो वह ईश्वर का लाडला पुत्र है। धनवान् होना अपराध नहीं है। धनवान् होना पाप नहीं है। अगर धनवान् व्यक्ति ईश्वर का लाडला पुत्र नहीं होता तो ईश्वर यह नहीं कहते कि : 'मैं मेरे योगी को, भक्त को, अगर साधना करते-करते उसका शरीर गिर गया है तो उसके बदले में स्वर्गादिक उत्तम लोक भोग-भोगने के लिए देता हूँ और स्वर्गलोक भोगने से उसके पुण्य क्षीण नहीं होते वरन् बहुत वर्षों तक वहाँ वास करके वह शुद्ध आचरणवाले श्रीमान् पुरुषों के घर में जन्म लेता है।'

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वती समाः ।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥

(श्रीमद्भगवद्गीता : ६.४१)

बुद्ध को जन्म मिला सम्राट शुद्धोदन के घर, तो इस बात से सिद्ध होता है कि भगवान को धन से 'एलर्जी' नहीं है, धनवानों से 'एलर्जी' नहीं है अपितु धन और सत्ता का दुरुपयोग करनेवालों से सबको ही 'एलर्जी' होती है, यह स्वाभाविक बात है।

अतः यहाँ वेद प्रार्थना करवाते हैं कि :

सर्व सद्बुद्धिमाप्नोतु ।

हम सबको सद्बुद्धि प्राप्त हो ।

रोकफेलर को विवेकानंद जैसे महापुरुष के दर्शन हुए, ऐसा मैंने सुना है। उन संत-महापुरुष की नूरानी निगाहों से रोकफेलर में सद्बुद्धि की किरण जगी । सबके अंतःकरण में सद्बुद्धि-कुबुद्धि दोनों छुपी हैं । अब यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम किसको जगाते हैं ?

सुमति कुमति सबके उर रहहिं ।
वेद-कुरान निगम अस कहहिं ॥

जैसे, धरती में मिर्च बोएँ तो तीखापन उभरता है एवं गन्ना बोएँ तो मिठास उभरती है । तीखापन और मीठापन दोनों ही इस धरती में छुपे हुए हैं। ऐसे ही सुमति और कुमति हम सबके अंतःकरण में छुपी हुई हैं। अगर हम सुमति विकसित करने के रास्ते पर चलें तो हम मानव में से महामानव बन सकते हैं और महामानव में से महेश्वर तत्त्व को पाकर, आत्मा-परमात्मा का साक्षात्कार करके जीवन्मुक्त हो सकते हैं। अगर हम अति भोग, अति संग्रह, अति लालच, अति शोषण, अति भ्रष्टाचार के पीछे पड़ते हैं तो हमारी सुबुद्धि का हिस्सा दब जाता है और कुबुद्धि जगने से हम मानव में से दानव के रास्ते चले जाते हैं। फिर सुविधाएँ तो होती हैं, लेकिन न घर में चैन न देश में शान्ति, न दिन में चैन न रात को नींद - ऐसी हालत हो जाती है।

हमारे शास्त्रों ने कहा है कि युक्तियुक्त वचन अगर बालक भी कहता है तो उसे शिरोधार्य करना चाहिए और युक्ति के विपरीत ब्रह्माजी भी कह दें तो उनकी बात को छोड़ देना चाहिए। सत्य का कितना आदर है सनातन धर्म में !

हे मनुष्य ! तू स्वयं अपने भाग्य का विधाता है। तू पुरुषार्थ कर। आज तक जो हो गया उसको यदि बदलना चाहे तो सनातन धर्म में उसकी भी व्यवस्था है।

जो बीत गयी सो बीत गयी
तकदीर का शिकवा कौन करे ?
जो तीर कमान से निकल गयी
उस तीर का पीछा कौन करे ?
क्यों करे और कब तक करे ?...

तू अपने भाग्य का आप विधाता है। अपने कल्याण का श्रीगणेश अभी से कर। गुजराती में कहावत है कि :

जाग्या त्यारथी सवार। भूल्या त्यांथी फरी गणो।

अर्थात् 'जबसे जगे तबसे सुबह और भूले वहाँ से फिर से गिनती शुरू करो ।'

रोकफेलर ने फिर से गिनती शुरू की। अपनी भूल को भूल समझा । जो अपने व्यक्तित्व और अहंकार को सजाने के लिए धन इकट्ठा करने की चिन्ता थी उस चिन्ता को चिंतन में बदल दिया कि :

'इस धन से बहुत लोगों को लाभ कैसे हो ? इस धन से मेरी ही उपस्थिति में **'बहुजन-हिताय बहुजनसुखाय'** की प्रवृत्तियाँ कैसे प्रारम्भ हों ?' यह सोचकर रोकफेलर ने गरीबों के आँसू पोंछने एवं सज्जनों की सेवा के कार्य शुरू कर दिये।

छः महीने में जो रोकफेलर मरनेवाला था, महाराज ! औदार्य-सुख ने, 'बहुजनहिताय' की शुभ भावना ने उसकी सुमति जगा दी और वह ९३ साल तक जीवित रहा ! यह आंशिक सद्बुद्धि

का प्रभाव है।

बहुत सारी बीमारियाँ तो मन की आधि से उत्पन्न होती हैं। मन की आधि और तन की व्याधि से जीव पीड़ित होता है। मन की आधि तब होती है, जब किसीका मकान, किसीका बाह्य विषय-विलास का सामान देखकर मन में होता है कि 'हम भी यह पायें... यह भोगें... यह करें...' अथवा किसीकी धन-दौलत, रूप-लावण्य देखकर मन में ईर्ष्या उत्पन्न होती है। इससे भी मन की आधि उत्पन्न होती है और ये ही आधियाँ तन की व्याधियों को जन्म देती हैं। जो दूसरों की ऊँचाई देखकर जलते रहते हैं, जो दूसरों की सुख-सुविधा देखकर अशान्त होते रहते हैं उनको मानसिक आधि होती है और मानसिक आधि की पकड़ में जो आते हैं वे शारीरिक व्याधि के शिकार हो जाते हैं। फिर सुविधाएँ तो बहुत होती हैं किन्तु मन की आधि और तन की व्याधि उन सुविधाओं का उपयोग नहीं करने देती।

जब हम प्रकृति के, सत्य के और ईश्वर के आड़े खड़े हो जाते हैं, तभी अशान्ति होती है, तभी दुःख होता है, तभी परेशानी होती है।

जो सुविधाओं का **उपयोग** करता है वह स्वस्थ रहता है और जो सुविधाओं का **उपभोग** करता है वह रोगी हो जाता है और अशान्त रहता है। **उपयोग** करने की मना नहीं है। श्रीकृष्ण के पास सोने की द्वारिका थी और श्रीराम के पास अयोध्या का राज्य था। राजा जनक के पास मिथिला का राज्य था। **उपभोग** करना एक बात है और **उपयोग** करना दूसरी बात। जो उपभोग करता है वह आधि-व्याधि का शिकार हो जाता है और जो सदुपयोग करता है - वह इन्हीं सामग्रियों, सुविधाओं और अधिकारों से देर-सबेर सत्यस्वरूप परमात्मा का प्यारा बनकर उसका दीदार भी कर सकता है... लेकिन हमारा मन बुद्धू हलवाई के लड़के जैसा है।

बुद्धू हलवाई का लड़का पढ़ने के लिए काशी गया था। काशी का आचार्य एक बार बुद्धू हलवाई के गाँव आया। बुद्धू हलवाई ने आवभगत करने के बाद पूछा :

''आचार्यजी ! मेरे बेटे को काशी में अध्ययन करते हुए बारह महीने हो गये हैं। वह कैसा है ? ठीक-ठाक तो है ?''

आचार्य : ''ठीक-ठाक है।''

बुद्धू हलवाई : ''खाता-पीता है ? मनीआर्डर वगैरह उसको मिलता है कि नहीं ?''

आचार्य : ''खाता भी है, पीता भी है, मनीआर्डर भी छुड़वाता है, सब ठीक-ठाक है।''

बुद्धू हलवाई : ''कोई कमी तो नहीं है ?''

आचार्य : ''केवल दो ही कमियाँ हैं।''

बुद्धू हलवाई : ''बस, केवल दो ही कमियाँ हैं ?''

आचार्य : ''हाँ, बस केवल दो ही कमियाँ हैं। एक तो उसके पास अपनी अक्ल नहीं है और दूसरे, शिक्षकों की बात मानता नहीं है। बाकी सब ठीक-ठाक है।''

ऐसे ही हमारा मन भी बुद्धू हलवाई के बेटे जैसा है। हमारे पास परम शान्ति पाने की अक्ल नहीं है, मुक्ति का आनंद पाने की हमारी अक्ल नहीं है और जिन्होंने पाया है उन महापुरुषों की एवं सत्शास्त्रों की बात हम मानते नहीं हैं - इसीलिए हम अशांति की आग में तपे जा रहे हैं।

सर्व सद्बुद्धिमाप्नोतु।

'हम सबको सद्बुद्धि प्राप्त हो।'

सद्बुद्धि से सात्त्विक निर्णय करें एवं सात्त्विक सुख पा लें, दिव्य सुख पा लें।

ये जो चीजें हैं व्हिस्की, ब्रान्डी आदि... इनको

पीकर जो सुख पाते हैं एवं अपने को बड़ा मानते हैं, उनका बड़प्पन ऐसा ही है, जैसे चूहे का।

कुछ शराबी शराब पीकर सो गये थे। बिल में से एक चूहा निकला और उसने ब्रान्डी की दो बूँदें चाट लीं। चूहे की खोपड़ी कितनी ? उसे नशा चढ़ गया और वह अपने दो पैरों पर खड़े होकर मूँछें ऐंठते हुए बोला : ''बुलाओ बिल्ली की बच्ची को, कहाँ रहती है ?''

...और जब तक बिल्ली की बच्ची नहीं थी तब तक तो वह चूहा सर्वेसर्वा था लेकिन बिल्ली की बच्ची के आते ही उसका क्या हाल हुआ होगा ? आप कल्पना कीजिए। ऐसे ही जो धन का, सत्ता का, रूप-लावण्य का, कूटनीति आदि का नशा लेकर, सहारा लेकर बोले कि 'हम ऐसे हैं... वैसे हैं...' तो जैसे चूहे ने ब्रान्डी की दो बूँदें चख लीं और अपने को बड़ा मानने लग गया। रूप, धन, सत्ता आदि का जो बड़प्पन होता है वह वास्तविक बड़प्पन को दबा देता है।

आपका असली बड़प्पन तो यह है कि आप सनातन सत्यस्वरूप परमात्मा के अविभाज्य अंग हो। अपने उस अविनाशी स्वरूप को जान लो तो फिर अन्य नश्वर बड़प्पनों का तो कोई मूल्य ही नहीं है। वेद भगवान कहते हैं :

सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु।
सर्वसद्बुद्धिमाप्नोतु सर्व सर्वस्तु नन्दतु॥

'हम सब अपने-अपने दुर्ग से तर जायें। हम सब मंगलमय हों। हम सब सद्बुद्धि को प्राप्त हों। हम सब आध्यात्मिक जगत में एक-दूसरे के लिए मददगार हों।'

ॐ शान्ति... ॐ आनंद... ॐ माधुर्य...

*

सुख-दुःख वृत्ति पर आधारित

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

परमात्मा के संकेत को न समझकर जीव अपनी ही चलाना चाहता है, इसीलिए दुःखी रहता है। यदि व्यक्ति अपने सोचने का तरीका बदल दे तो सुखी हो जाये। वे ही लोग दुःखी और परेशान होते हैं जिनके सोचने-विचारने का तरीका सही नहीं है।

जो काम सत्संग से होता है वह काम दुनिया के किसी पद, सौन्दर्य, सत्ता या अधिकार से नहीं हो सकता है। सत्संग से ही सही दृष्टि मिलती है। साधन-सामग्री कितनी भी मिल जाये, लेकिन दृष्टि सही न हो तो वह सब मिलने पर भी मनुष्य दुःखी रहता है।

सुखी या दुःखी होना- यह किसी अन्य वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति पर नहीं, अपितु अपने ही सोचने-विचारने के ढंग पर निर्भर करता है। मध्यम आर्थिक स्थितिवाला व्यक्ति अपने से ऊँचे धनवान व्यक्ति को देखकर अपने को दुःखी मानता है और अपने से गरीब व्यक्ति को देखकर अपने को सुखी मानता है, तो वास्तव में यह सुख-दुःख आधारित है उसके विचारने के ढंग पर ही न ! अतः मनुष्य को चाहिए कि अपने सोचने-विचारने का तरीका सही कर ले।

एक ही बगीचे में भौंरा और गुबरैला दोनों जाते हैं। भौंरा तो फूलों का रस लेकर आनंदित होता है जबकि गुबरैला बगीचे की खाद के पास

जाता है । फिर यदि गुबरैला सोचे कि : 'जहाँ देखो वहाँ गंदगी ही गंदगी है । इतने बढ़िया बगीचे में भी देखो तो गंदगी है । हमारे भाग्य में तो गंदगी ही है, क्या करें ?' तो इसमें दोष किसका है ? बगीचे का या स्वयं गुबरैले का ? इसी प्रकार गाय के पास से बछड़े को दूध मिलता है, बछड़ा दूध पीता है जबकि बगई उसी गाय से खून चूसती है ।

दुनिया तो वही-की-वही है लेकिन उसमें अविचारवान् मनुष्य पापकर्म करके दुःख और परेशानी भुगतता है जबकि विचारवान् मनुष्य सत्कर्म करके सुख और आनंद पाता है । यदि प्रारब्ध वेग से उसे दुःख मिलता है तो उसे भी ईश्वर का मंगलमय विधान मानकर स्वीकार करता है और सुखी रहता है। इस प्रकार दुःख में भी सुख बनानेवाले लोग सुखी रहते हैं जबकि सुख में भी दुःख बनानेवाले लोग बेचारे दुःखी ही होते रहते हैं।

यह तो बात हुई अपनी-अपनी बुद्धि से सुख और दुःख मानने की, लेकिन भगवान श्रीकृष्ण तो इससे भी ऊँची बात करते हैं :

''सुख और दुःख, विक्षेप और शांति जिस अन्तःकरण में उत्पन्न होते हैं, वह अन्तःकरण जहाँ से सत्ता पाता है, तू वही सार सत्ता है। विक्षेप होकर भी तू दिख रहा है और शांति होकर भी तू दिख रहा है। **इदं** होकर भी तू दिख रहा है और **अहं** होकर भी तू दिख रहा है। मित्र की गहराई में भी तू है और शत्रु की गहराई में भी तू है। सुख की गहराई में भी तू है और दुःख की गहराई में भी तू है । सुखाकार वृत्ति पैदा होती है तो अपने को सुखी मानता है और दुःखाकार वृत्ति पैदा होती है तो अपने को दुःखी मानता है। रात्रि के समय नींद में व्यक्ति की वृत्तियाँ जब शांत हो जाती हैं तो उसे सुख-दुःख दोनों नहीं होते। लेकिन वही वृत्ति जब ब्रह्म-परमात्मा का चिंतन करके ब्रह्माकार हो जाये तो वह ब्रह्म हो जाता है, मुक्तात्मा हो जाता है।''

है सब दृष्टि का ही खेल। ...और सही दृष्टि मिलती है - सत्संग से। जो काम सत्संग से होता है वह काम दुनिया के किसी पद, सौन्दर्य, सत्ता या अधिकार से नहीं हो सकता है । सत्संग से ही सही दृष्टि मिलती है। अतः प्रयत्नपूर्वक सत्संग करना चाहिए। साधन-सामग्री कितनी भी मिल जाये, पद-प्रतिष्ठा कितनी भी मिल जाये लेकिन दृष्टि सही न हो तो वह सब मिलने पर भी मनुष्य दुःखी रहता है, चिंतित रहता है और वह 'सब चीजें चली न जायें' इस भय से अभिभूत रहता है । हालाँकि चीजें एक-न-एक दिन जाने ही वाली हैं । जो मिला है वह किसी दिन छूटने ही वाला है । जबकि सत्संग से हमें वह चीज मिलती है जो कभी जाती नहीं है, कभी बिछुड़ती नहीं है, कभी छूटती नहीं है और वही है शुद्ध-बुद्ध, नित्य, शाश्वत, चैतन्य परमात्मा का ज्ञान।

अतः वशिष्ठजी के इन स्वर्णिम वचनों को हृदय-पटल पर लिख लेना चाहिए : ''चाण्डाल के घर की भिक्षा ठीकरे में एक बार मिले और ब्रह्मविद्या का सत्संग मिले तो अन्य ऐश्वर्यों से वह अनन्त गुना हितकारी है।''

अतः अपनी चित्तवृत्ति को सत्संग के द्वारा सत्स्वरूप में लगाना ही सार है।

*

दुनिया तो वही-की-वही है लेकिन उसमें अविचारवान् मनुष्य पापकर्म करके दुःख और परेशानी भुगतता है जबकि विचारवान् मनुष्य सत्कर्म करके, सुख और आनंद पाता है । यदि प्रारब्ध वेग से उसे दुःख मिलता है तो उसे भी ईश्वर का मंगलमय विधान मानकर स्वीकार करता है और सुखी रहता है।

आत्मप्रसाद

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

दुनिया का कोई सत्ताधीश, कोई विद्वान्, कोई डॉक्टर किसीके सब दुःख सदा के लिए दूर नहीं कर सकता।

डॉक्टर शरीर का दुःख दूर कर सकता है, किन्तु मन का नहीं। मनोवैज्ञानिक मानसिक बीमारियों को दूर कर सकता है तो शरीर की बीमारियों को दूर नहीं कर सकता और जन्म-मरण के दुःख को तो इनमें से कोई भी दूर नहीं कर सकता। लेकिन आत्मप्रसाद से सारे दुःख सदा के लिए दूर हो जाते हैं।

निगुरे लोगों को व्रत, उपवास, तप करने से भी आनंद और साधना की ऊँचाई का वह अनुभव नहीं होता जो गुरुओं के प्यारों को होता है।

यदि आप खिन्न होते हो, दुःखी होते हो, फरियाद करते हो तो आपकी जीवनशक्ति क्षीण हो जाती है। आपके अपने भी पराये हो जाते हैं। आप जब प्रसन्न रहते हो तो पराये भी अपने हो जाते हैं।

हँसते के साथ हँसे दुनिया,
रोते को कौन बुलाता है ?

यदि आप खिन्न होते हो, दुःखी होते हो, फरियाद करते हो तो आपकी जीवन-शक्ति क्षीण हो जाती है। आपके अपने भी पराये हो जाते हैं। आप जब प्रसन्न रहते हो तो पराये भी अपने हो जाते हैं।

चित्त की प्रसन्नता भी आत्मप्रसाद की प्राप्ति से ही संभव है। जिसको आत्मप्रसाद की प्राप्ति हो गयी है, उसके जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि के दुःख सदा के लिए दूर हो जाते हैं क्योंकि वह जरा-व्याधि आदि को अपने में मानता ही नहीं। जिनको आत्मज्ञान का सत्संग मिलता है वे बहुत बड़ी कमाई करते हैं। लाखों-करोड़ों कमानेवाले के चित्त की आंतरिक स्थिति इतनी ऊँची नहीं होती जितनी सत्संगी की होती है। कई करोड़पति अमेरिका के अस्पतालों में सड़ रहे हैं। उन्हें कोई खुशी नहीं है, चैन नहीं है, आनंद नहीं है।

अतः पहली बात है प्रसन्न रहना।

दूसरी बात है कि भगवान को अपना मानना। 'भगवान हमारे हैं और हम भगवान के हैं।' भगवान को अपना मानने से जितना लाभ होता है उतना व्रत-उपवास करने से भी नहीं होता। हम गंगा में नहाते हैं, होम-हवन करते हैं, ये तो बहिरंग साधन हैं। परन्तु 'भगवान मेरे हैं' यह हम अंतर में मानते हैं, अतः यह अंतरंग साधन है।

तीसरी बात है भगवान के नाम का स्मरण और जप। कभी-कभी कमरा बंद करके भगवान का जो भी नाम प्यारा लगे, गुरु महाराज ने जो भी मंत्र दिया हो उसका जप करना चाहिए।

यदि निगुरे हो तो...

हकीकत में निगुरे व्यक्ति का जीवन तो वैसे ही व्यर्थ है जैसे विधवा स्त्री का शृंगार।

जितना आनंद सगुरे लोगों को मिलता है उतना तो

निगुरे को तपस्या करने से भी नहीं मिलता। निगुरे लोगों को व्रत, उपवास, तप करने से भी आनंद और साधना की ऊँचाई का वह अनुभव नहीं होता जो गुरुओं के प्यारों को होता है। उनको गुरुओं से, भगवान से स्नेह करते हुए, बातचीत करते हुए, एकटक निहारते हुए आनंद का अनुभव होता है। उनकी फोटो के समक्ष निहारते-निहारते जप करने से भी हृदय आनंद से पूर्ण होने लगता है, प्रेरणा भी मिलती है। ऐसा करने से अंदर का सुख एवं अंदर का आराम बढ़ता है और जितना आपका अंदर का सुख और आराम बढ़ता जाता है, जितनी आध्यात्मिक शक्तियाँ बढ़ती जाती हैं उतनी भौतिक चीजें तो पाले हुए कुत्ते की तरह अपने-आप पीछे-पीछे चली आती हैं। फिर आप उसका उपयोग करो, उपेक्षा करो या बाँटो- यह आपकी मर्जी है।

आध्यात्मिक उन्नति से भौतिक उन्नति का होना तो स्वाभाविक है।

अतः प्रसन्न रहना, भगवान को अपना मानना, अपने को भगवान का मानना, भगवान के नाम का जप एवं स्मरण करना, भजन करना आदि से तन-मन पवित्र होता है, बुद्धि तीव्र होती है और आत्मप्रसाद की प्राप्ति होती है। एक बार यदि आत्मप्रसाद की प्राप्ति हो जाती है तो फिर चौरासी लाख जन्मों की खटपट सदा के लिए मिट जाती है।

भगवान को अपना मानने से जितना लाभ होता है उतना व्रत-उपवास करने से भी नहीं होता। हम गंगा में नहाते हैं, होम-हवन करते हैं, ये तो बहिरंग साधन हैं। परन्तु 'भगवान मेरे हैं' यह हम अंतर में मानते हैं, अतः यह अंतरंग साधन है।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ७८ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अप्रैल तक अपना नया पता भिजवा दें।

एक मजदूर पर करुणा-कृपा

[पूज्यश्री के जन्मोत्सव : ७ अप्रैल '९९ पर विशेष]

श्रीरामचरितमानस में आता है :

संत हृदय नवनीत समाना।
कहा कबिन्ह परि कहै न जाना॥
निज परिताप द्रवइ नवनीता।
पर दुःख द्रवहिं संत सुपुनीता॥

'संतों का हृदय मक्खन के समान होता है, ऐसा कवियों ने कहा है। परंतु उन्होंने असली बात कहना नहीं जाना क्योंकि मक्खन तो अपने को ताप मिलने से पिघलता है जबकि परम पवित्र संत दूसरों के दुःख से पिघल जाते हैं।''

(उत्तरकाण्ड : १२४.४)

संतों का हृदय बड़ा दयालु होता है। जाने-अनजाने कोई भी जीव उनके संपर्क में आ जाता है तो उसका कल्याण हुए बिना नहीं रहता। एक उपनिषद् में उल्लेख आता है :

यद् यद् स्पृश्यति पाणिभ्यां यद् यद् पश्यति चक्षुषा।
स्थावरणापि मुच्यन्ते किं पुनः प्राकृताः जनाः॥

'ब्रह्मज्ञानी महापुरुष ब्रह्मभाव से स्वयं के

वास्तव में सत्य और आप दो चीज नहीं हैं। सत्य आपसे दूर नहीं है, परमात्मा आपसे दूर नहीं है, रब आपसे दूर नहीं है, पराया नहीं है। रब कहो, सत्य कहो, सनातन शांति कहो - वह आपका अपना निज स्वरूप है। लेकिन असत्य शरीर को, असत्य देह को, असत्य पदार्थों को, असत्य उपाधियों को असत् मति ने इतना मूल्य दिया है कि पग-पग पर सत्य का घात हो जाता है।

गाँधीजी कहा करते थे :

''सत्य ही ईश्वर है।''

नानकजी ने कहा है :

आद सत्। जुगात सत्।
है भी सत्। नानक होसे भी सत्।

यह शरीर आदि में नहीं था, युगों पूर्व यह शरीर नहीं था, बाद में भी नहीं रहेगा और अभी भी हर पल 'नहीं' के तरफ ही जा रहा है... लेकिन यह शरीर जिसकी सत्ता से चलता है वह अकाल पुरुष, वह रब तो शरीर से पहले भी था, अभी भी है और बाद में भी रहेगा। दो घण्टे पहले शरीर के जो कोष थे उनमें से कितने ही नष्ट हो गये और नये बन गये। सामने थाली में भोजन है लेकिन खा लिया तो 'मैं' बन गया। कल के 'मैं' का हिस्सा कितना ही बदल गया। उस सत्य की सत्ता, उस वास्तविक 'मैं' की सत्ता जब इस स्थूल शरीर में घुलामिला देते हैं तो आदमी भोगी बनता है, अतृप्त बनता है, अशान्त बनता है, क्रूर-कुटिल बनता है। उस वास्तविक सत्य की 'मैं' को जब सूक्ष्म शरीर में मिला देते हैं और अपने सूक्ष्म शरीर में ही यदि आदमी की आसक्ति होती है तो वह अपनी ही बात पर अड़ा रहता है लेकिन सद्बुद्धि प्राप्त हो जाये तो 'एक यह मेरा शरीर है' ऐसी भ्रांति चली जायेगी। 'मेरे मन में जो आया वही होना चाहिए' ऐसा दुराग्रह चला जायेगा। फिर तो,

मेरो चिन्त्यो होत नाहीं, हरि को चिन्त्यो होय।
हरि चिन्त्यो हरि करें, मैं रहूँ निश्चिंत॥

फिर आप निश्चिन्त होकर संकल्प करेंगे, प्रवृत्ति करेंगे और समष्टि आपको सहयोग करेगी। अगर समष्टि के सिद्धान्त के अनुकूल होगा तो आपको कर्म करने का आनंद आयेगा, उत्साह आयेगा और प्रतिकूल होगा या आपका मनमाना नहीं भी हुआ तो आपको क्षोभ नहीं होगा, अशान्ति नहीं होगी।

जब हम प्रकृति के, सत्य के और ईश्वर के आड़े खड़े हो जाते हैं, तभी अशान्ति होती है, तभी दुःख होता है, तभी परेशानी होती है। नानकजी सत्य के साथ घुलमिलकर रहते थे।

तेरा भाणा मीठा लागे।
जो तिद् भावे सो भलीकार।
तू सदा सलामत निरंकार।

वह परमात्मा सदा सलामत है किन्तु आपकी मति और आपके विचार, आपका तन और मन सदा सलामत नहीं है। दस मिनट के बाद आपके मन में कौन-सा विचार उठेगा उसका आपको पता नहीं और जितने भी विचार उठते हैं उनमें से कई विचार तो आपको याद रहते हैं और कई उठ-उठकर चले जाते हैं। लेकिन विचार नहीं उठे थे तब भी जो था, विचार उठे तब भी जो है और विचार

प्राकृतिक जीवन जीना यह समय गँवाना नहीं, अपितु समय सार्थक करना है। कभी-कभी बगीचे की सैर करना, नदी तट पर जाना, नौका-विहार करना, कभी बच्चों के साथ बच्चे होकर आनंद-विनोद करना- यह तो जीवन के फूल को महकाना है।

जो सुविधाओं का उपयोग करता है वह स्वस्थ रहता है और जो सुविधाओं का उपभोग करता है वह रोगी हो जाता है और अशान्त रहता है।

श्रावस्ती नगरी में अंगुलीमाल नाम का एक डाकू रहता था। नगर के सभी लोग उससे बड़े भयभीत रहते थे। यहाँ तक कि वहाँ का नरेश भी उससे डरता था। वह अंगुलीमाल जिसको भी देखता, उसका गला काट देता और उसकी उँगलियाँ काटकर, उनकी माला बनाकर पहनता था, इसीलिए उसका नाम अंगुलीमाल पड़ा था।

एक बार भगवान बुद्ध उसी मार्ग से जा रहे थे, जिधर वह खूँखार डाकू अंगुलीमाल रहता था। भगवान बुद्ध को उस मार्ग से जाते हुए देखकर लोगों ने उन्हें आगे न बढ़ने के लिए प्रार्थना की एवं कहा : ''भन्ते ! कृपा करके आप इस मार्ग से न जाएँ। कुछ ही दूरी पर अंगुलीमाल नामक एक खूँखार डाकू रहता है।''

बुद्ध : ''कोई बात नहीं।''

यह कहकर बुद्ध आगे चल पड़े। बीहड़ जंगल में कुछ दूर जाने पर उन्हें अंगुलीमाल मिला। वह बुद्ध के सामने आ धमका और बोला :

''भिक्षुक ! ये आखिरी घड़ियाँ हैं। अपने इष्ट का स्मरण कर लो। तुम स्वयं काल के द्वार पर आ पहुँचे हो। मैं तुम्हारा शिरोच्छेद करूँगा और तुम्हारी उँगलियाँ काटकर उनकी माला पहनूँगा।''

भगवान बुद्ध : ''तू मेरा शिरोच्छेद कर दे उसकी मना नहीं है लेकिन पहले इस पेड़ के दो पत्ते तोड़कर तो दिखा !''

आवेश-आवेश में अंगुलीमाल ने दो पत्ते तो क्या, पूरी शाखा ही तोड़कर बुद्ध के सामने रख दी एवं कहा :

''जितने पत्ते चाहिए उतने ले लो।''

बुद्ध : ''डाल को फिर से वृक्ष पर जोड़ दो।''

अंगुलीमाल : ''डाल जुड़ेगी कैसे ?''

बुद्ध : ''जिसको जोड़ने की शक्ति नहीं है, उसको तोड़ने का क्या अधिकार है ?''

अंगुलीमाल : ''तो क्या आप जोड़ना जानते हैं ?''

बुद्ध : ''हाँ, मैं जोड़ने के रास्ते हूँ।''

अंगुलीमाल : ''जोड़ने का भी कोई रास्ता होता है ?''

बुद्ध : ''हाँ, जोड़ने का रास्ता ही वास्तविक रास्ता है।''

यह कहकर बुद्ध ने अपने 'स्व' में विश्रांति पाकर उसको निहारा। उसका हृदय परिवर्तित हो उठा एवं वह बुद्ध के श्रीचरणों में गिर पड़ा।

बुद्ध ने करुणा करके पुनः कहा : ''औरों के शिरोच्छेद करके, उँगलियाँ काटकर तू अपने कर्म क्यों बढ़ा रहा है ? अब तू अपने मन को मालिक से जोड़ने के रास्ते चल।''

जिसके मन-बुद्धि जितने उस परब्रह्म परमात्मा के करीब पहुँचते हैं, उसके द्वारा उतनी ही कुछ कल्पनातीत घटनाएँ घट जाया करती हैं जिसे लोग चमत्कार कहते हैं।

बुद्ध के शांतिदायक अमृतवचनों एवं करुणा भरी नजरों से प्रभावित होकर अंगुलीमाल ने उनका शिष्यत्व स्वीकार कर लिया एवं भिक्षुक बन गया।

श्री सद्गुरु के तो दो वचन ही काफी होते हैं। ब्रह्मवेत्ताओं के वचन में बड़ी दीक्षा होती है, बड़ी शिक्षा होती है। महाराज ! भगवान बुद्ध ने अंगुलीमाल को 'भिक्षुक' कह दिया और उसे अपने साथ लेकर लौटने लगे श्रावस्ती। उसी वक्त श्रावस्तीनरेश पाँच सौ घुड़सवार लेकर रोष में उधर की ओर आ रहा था। नरेश ने देखा कि बुद्ध आ रहे हैं तो घोड़े से उतरकर उन्हें प्रणाम किया। भगवान बुद्ध ने पूछा : ''कहाँ जा रहे हो ?''

नरेश : ''भगवन् ! अंगुलीमाल का नाम सुना है ? वह प्रजा को बड़ा सताता है। उसको मारने जा रहा हूँ।''

भगवान बुद्ध : ''अगर वह अंगुलीमाल हिंसा

का रास्ता छोड़कर अहिंसा के रास्ते चल पड़ा हो, तोड़ने का रास्ता छोड़कर जोड़ने के रास्ते चल पड़ा हो, अपने बुरे कर्मों को छोड़कर भिक्षुक बन गया हो तो तुम क्या करोगे ?''

नरेश : ''फिर मैं उसे मारूँगा नहीं वरन् उसकी आजीविका की, उसकी भिक्षा की व्यवस्था करूँगा।''

बुद्ध : ''राजन् ! जो मेरे साथ में भिक्षुक वेष में खड़ा है, वही अंगुलीमाल है।''

अंगुलीमाल का नाम सुनते ही राजा काँपने लगा किन्तु भगवान बुद्ध के साथ उसे देखकर वह थोड़ा संयत हुआ एवं बुद्ध को प्रणाम करके लौट चला।

अब भिक्षुक अंगुलीमाल कभी-कभी भिक्षा लेने जाने लगा। लोग उसे देखते तो जिसके कुटुम्ब के लोगों की हत्या उसके द्वारा हुई थी उनके मन में अंगुलीमाल के लिए रोष उत्पन्न हो जाता। इसी प्रकार एक बार रोष-रोष में लोगों ने भिक्षा लेने के लिए आये हुए अंगुलीमाल पर पत्थरबाजी करके उसका सिर फोड़ दिया।

भिक्षापात्र अन्न, फल एवं दूध से नहीं वरन् रक्त से सन गया। अंगुलीमाल वापस आया। उसे लहूलुहान देखकर बुद्ध ने कहा :

''क्या हुआ ?''

अंगुलीमाल : ''लोगों ने कहा कि 'यही वह अंगुलीमाल है जो अब भिक्षुक बन गया है... जिसने मेरे काका को मार दिया था... मेरे दादा को मार दिया था... मेरे भतीजे को मार दिया था...' ऐसा करके लोग पुराना वैर चुकाने के लिए मेरे ऊपर टूट पड़े और खोपड़ी रंग दी।''

बुद्ध के हृदय में बड़ी प्रसन्नता हुई कि अंगुलीमाल का सिर फूटा हुआ है, रक्त की धार से भिक्षापात्र सन गया है फिर भी वह धैर्य एवं शांति से खड़ा है। बुद्ध ने कहा :

''भिक्षुक ! तू धन्य है ! ये वैरी कई जन्मों तक तेरा वैर चुकाने को आते और इसके लिए तुझे भी कई जन्म लेने पड़ते। अनेकों जन्मों का लेना-देना तेरे भिक्षा लेने के बहाने पूरा हो गया। वास्तव में तू भिक्षुक है।''

भिक्षुक ! तू धन्य है ! ये वैरी कई जन्मों तक तेरा वैर चुकाने को आते और इसके लिए तुझे भी कई जन्म लेने पड़ते। अनेकों जन्मों का लेना-देना तेरे भिक्षा लेने के बहाने पूरा हो गया।

आपको भी कोई डाँटे या कोई इल्जाम लगाये या आपके लिए कोई मुसीबत खड़ी कर दे तो आप भी अपने को अशान्त या उद्विग्न मत होने देना। कौन जाने किस जन्म में दी होगी गाली ? किया होगा अपमान ?... चलो, लेना-देना पूरा हो रहा है। भगवान की लीला है। वाह प्रभु ! वाह... तेरी मर्जी पूरण हो...

किसीने ठीक ही कहा है :

इल्जाम लगानेवालों ने
इल्जाम लगाये लाख मगर।
तेरी सौगात समझकर
हम सर पे उठाये जाते हैं ॥

भगवान बुद्ध की एक मीठी नजर ने, दो शांतिदायक वचनों ने खूँखार डाकू अंगुलीमाल जैसे को भी भिक्षुक के रूप में परिवर्तित कर दिया। कैसी दिव्य करुणा है बुद्ध की !

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।
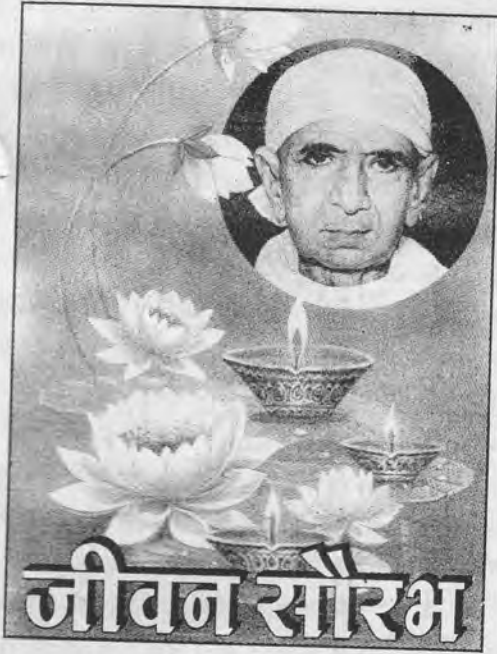
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

परदेश के लोगों के दिल की पुकार को सुनकर कृपालु पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज छः वर्षों के बाद १९६९ में ९ फरवरी, रविवार के दिन पुनः सिंगापुर पधारे। काफी समय तक सिंगापुर एवं उसके आसपास के शहरों में घूमकर उन्होंने ज्ञान की अमृतधारा बरसायी। फिर से पूर्व एशियावासियों को आत्मरस का, अंतरात्मा के माधुर्य की झलक पाने का स्वर्णिम अवसर मिला। अनेकों नये भक्तजनों को इस अलबेले संत के दर्शन हुए, उनके श्रीचरणों में पुष्प समर्पित करने का सौभाग्य मिला एवं उनका आशीर्वाद पाने का अनुपम अवसर मिला।

संत सहहि दुःख
परहित लागी...
संत पुरुष हमेशा दूसरों के कल्याण के लिए स्वयं दुःख सहते हैं।

धन्यवाद है ऐसे कलियुग के उन जीवों को जिन्हें ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों का सान्निध्य एवं आत्मज्ञान सुनने, विचारने एवं आत्मरस पाने की रुचि होती है। पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने अपने प्रेमी भक्तों को कर्त्तव्य-पालन, सदाचार का महत्त्व, मानव जीवन की महत्ता, परमात्मा में प्रीति, सुखी जीवन जीने की कुंजी एवं आसन, प्राणायाम तथा यौगिक क्रियाओं का महत्त्व समझाया। उस समय अलग-अलग जाति के लोगों ने बड़ी संख्या में उपस्थित होकर पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के सान्निध्य का लाभ लिया।

इसके बाद पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने मुंबई के लिए प्रस्थान किया। वहाँ बड़ी संख्या में उपस्थित श्रद्धालु भक्तों ने उनका भावभीना स्वागत किया। अपने प्यारे गुरुवर के दर्शन करके उनका हृदय पुलकित एवं पावन हो गया।

पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज भारत आकर भी एक ही जगह स्थायी रूप से नहीं रहे, वरन् अलग-अलग जगहों पर जाकर लोक-उत्थान के सेवाकार्यों में जुड़ गये।

भारत के कोने-कोने में, जहाँ लोगों को धार्मिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक सहायता की जरूरत पड़ती वहाँ जाकर उन लोगों के लिए आशीर्वाददाता बन गये। जिज्ञासुओं एवं भक्तों को घर बैठे दर्शन-सत्संग का लाभ देते और स्वास्थ्य संबंधी मार्गदर्शन भी देते।

लोकलाड़ीले पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज ने भक्ति, योग एवं वेदांती जीवन-दर्शन के गहन ज्ञान द्वारा एवं हृदयंगम करने योग्य सरल एवं सुबोध प्रवचन द्वारा परदेश के जनसमुदाय में श्रद्धा एवं आदर का उच्च

स्थान पा लिया था। वे परम आदरणीय एवं परम पूजनीय बन गये थे। पूर्व एशिया के लोग पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज के रंग में इतने रंग गये थे कि उनके दर्शन एवं अमृतवाणी की प्यास एवं तड़प दिनोंदिन बढ़ती जा रही थी। अतः उन लोगों ने पुनः पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज को तीसरी बार पधारने के लिए भावभीना आमंत्रण दिया।

'श्रीरामचरितमानस' के उत्तरकांड में कागभुशुंडजी गरुड़जी से कहते हैं :

संत सहहि दुःख परहित लागी...

संत पुरुष हमेशा दूसरों के कल्याण के लिए स्वयं दुःख सहते हैं। सभी के परम हितैषी, परम कृपालु पूज्य श्री लीलाशाहजी महाराज भी अपनी उम्र एवं शरीर की परवाह किये बिना उन लोगों के प्रेम एवं अंतर की पुकार सुनकर २८ सितंबर १९७२ में पूर्व एशिया की यात्रा के लिए तैयार हुए। उस यात्रा के दौरान जो शिष्य उनके साथ थे, उनकी ही भाषा में :

धन्यवाद है ऐसे कलियुग के उन जीवों को जिन्हें ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों का सान्निध्य एवं आत्मज्ञान सुनने, विचारने एवं आत्मरस पाने की रुचि होती है।

''२८ सितंबर १९७२ को पूज्य स्वामीजी हाँगकाँग पधारे। हवाई अड्डे पर असंख्य प्रेमी भक्त हाथ में सुगंधित फूल, हार एवं गुलदस्ते लेकर आये।

पूज्य स्वामीजी को देखकर उनका हृदय खुशी से नाच उठा एवं उनके दर्शन से उनकी आँखें तृप्त हो गयीं। एशियाई धनपतियों में सबसे अग्रणी ज्योर्ज हरिलीला हाँगकाँग में पूज्य स्वामीजी के पावनकारी, जीवन-उद्धारक सत्संग के आयोजन के पुण्यकार्य में भागीदार हुए। काफी समय से हरिलीला के कुटुंबीजन पूज्य स्वामीजी से प्रार्थना कर रहे थे कि हाँगकाँग पधारकर हमारे ऊपर कृपादृष्टि डालकर हमें पावन करो। पूज्य स्वामीजी ने भी थोड़े वर्ष पूर्व उन लोगों को वचन दिया था कि 'जरूर आऊँगा।'

हरिलीला एवं कुटुम्बीजनों ने खूब श्रद्धा एवं भक्तिभाव से पूज्य स्वामीजी को अपने घर में ही रखने के लिए सुंदर व्यवस्था करके सेवा का सुनहरा अवसर पा लिया। पूज्य स्वामीजी ने हाँगकाँग में अलग-अलग जगहों पर बुद्धि की दिव्यता, मन की प्रसन्नता एवं शरीर की स्वस्थता बढ़ाने के प्रयोग बताए। भोग-विलास में पैसों का दुर्व्यय न करने की चेतावनी दी और उसका सदुपयोग करने का मार्गदर्शन दिया। बीड़ी, सिगरेट, दारू, पान, चाय एवं कॉफी जैसे पदार्थों का सेवन करने से कितना नुकसान होता है यह समझाया। उन्होंने कहा :

''तमाकू से फेफड़े, मुँह एवं गले में कैन्सर, हृदयाघात, पेट के रोग एवं अंधापन जैसे भयंकर रोग होने की संभावना रहती है। चाय-कॉफी पीने से पाचन-शक्ति मंद होती है, दिमाग के तंतु कमजोर होने लगते हैं, वीर्य पतला होने लगता है, मधुमेह, अनिद्रा एवं शीघ्र वृद्धत्व जैसे रोग होने लगते हैं। दारू जैसे मादक पदार्थों से मूर्खता, पागलपन, लकवा एवं क्षय (टी.बी.) जैसे जानलेवा रोग घर करते हैं। दारू पीनेवाले की दस पीढ़ियाँ बरबाद हो जाती हैं।''

आज कल के ठंडे पेय कोका कोला एवं पेप्सी कोला में कार्बन डाईआक्साइड गैस होती है जो कि स्वास्थ्य के लिए खूब हानिकारक है।

नशेवाली चीजों के सेवन से जीवनशक्ति का जो ह्रास होता है उसके विषय में बहुत ही वैज्ञानिक ढंग से समझाते हुए पूज्य स्वामीजी ने लोगों को नशे से मुक्त करने का एक जबरदस्त अभियान चलाया जिससे लोग बहुत प्रभावित हुए।

हाँगकाँग में उन्होंने कॉवलून के हिन्दू मंदिर, हेप्पी वेली के हिन्दू मंदिर, राधा-कृष्ण एंडकवाला के घर एवं हरिलीला के घर सत्संग दिया था।

(क्रमशः)

*

शिवजी की अनोखी लीला

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

चौदह वर्ष के वनवास से लौटकर अयोध्या में सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् भगवान श्रीराम ने जब श्राद्ध किया तो प्रार्थना की कि :

'यक्ष, गंधर्व, किन्नर, देवता एवं देवाधिदेव महादेव भी श्राद्ध में पधारें- यह दास राम की प्रार्थना है।'

उस जमाने में टेलीफोन या 'कोर्डलेस' फोन की व्यवस्था तो नहीं थी, किन्तु मनुष्य का मन इतना शुद्ध होता था कि वह वातावरण में अपना संकल्प फेंक देता था और वह संकल्प 'टेलीपैथी' (मनस्संचार) के द्वारा संबंधित व्यक्ति तक पहुँच जाता था।

भगवान महादेव ने सोचा कि श्रीरामजी वनवास से लौटकर आ गये हैं। श्राद्ध के बहाने मुलाकात भी हो जायेगी और थोड़ा विनोद भी हो जायेगा।

श्राद्ध में जहाँ संत बैठे थे वहाँ महादेवजी भी एक साधु के रूप में बैठ गये। जो त्रिभुवन को चट कर सकते हैं वे थाली में हाथ घुमायें और भोजन-सामग्री स्वाहा हो जाये तो क्या बड़ी बात है ?

कितनी दिव्य महिमा है सत्संग की ! भगवान् श्रीराम भी वरदान के रूप में सत्संग की माँग करते हैं।

शत्रुघ्न भोजन परोसते-परोसते थक गए। भरतजी भी थक गए और लक्ष्मणजी भी थक गये । तब वे दौड़ते-दौड़ते श्रीराम के पास गये और बोले :

''प्रभु ! ऐसे एक बाबाजी आये हैं कि परोसते ही भोजन चट कर जाते हैं। पतीले के पतीले खत्म हुए जा रहे हैं और उनके पेट की 'डिजाइन' वही-की-वही।''

श्रीरामजी स्वयं वहाँ आये, जहाँ पंगत बैठी थी और उन बाबाजी को गौर से देखकर बोले :

''ये तो भगवान साम्ब सदाशिव हैं। उमापति शिव स्वयं पधारे हैं। ये तो त्रिभुवन को स्वाहा कर लेते हैं तो तुम्हारे इन बर्तन-भांडों का सफाया कर दें- इसमें क्या आश्चर्य ? इनकी तृप्ति तो माँ अन्नपूर्णा ही कर सकती हैं।''

भगवान श्रीराम ने माँ अन्नपूर्णा का आह्वान किया। शिवजी बोले :

''राम ! तुमने पहचान लिया, अब खेल खत्म हो गया।''

फिर उन्होंने शत्रुघ्न से कहा :

''शत्रुघ्न ! जरा मुझे खड़ा कर दो।''

शत्रुघ्न को गर्व हुआ था कि मैंने शत्रुओं पर विजय पाकर पड़ोसियों का राज्य जीता था। भगवान और संत दूसरी सब चीजें चला लेते हैं लेकिन वे अपने भक्त और शिष्य का अहंकार कभी नहीं चलाते।

शत्रुघ्न ने अपना पूरा जोर लगाया लेकिन शिवजी को उठाने में वे विफल हो गये। भरतजी ने भी अपना बाहुबल आजमाया लेकिन वे भी विफल हो गये । लक्ष्मणजी की बारी आयी । लक्ष्मणजी रामजी के साथ ज्यादा रहे थे। उन्होंने रामजी को प्रणाम करके कहा :

''प्रभु ! आप आशीर्वाद दें कि मैं शिवजी को

उठाने में सफल हो जाऊँ।''

श्रीराम : ''लक्ष्मण ! तुम बहुत भोले हो। शिवजी का धनुष उठाने के लिए मैंने शिवजी के आशीर्वाद माँगे थे। रावण पर विजय पाने के लिए सेतुबंध रामेश्वर की स्थापना की थी और अभी खुद शिवजी को उठाने के लिए तुम मेरा आशीर्वाद माँगते हो ? तुम उन्हीं की कृपा माँगो।''

तब लक्ष्मणजी ने शिवजी से कहा :

''प्रभु ! आप ही आशीर्वाद दीजिए, ताकि मैं आपकी सेवा में सफल हो सकूँ।''

लक्ष्मणजी ने प्रार्थना की और शिवजी की कृपा से शिवजी को खड़ा करने में सफल हुए। रामजी के विश्राम-कक्ष में उन्हें लिवाया गया। कुल्ले करने के लिए माँ सीता स्वर्ण कलश में जल लेकर आयीं। शिवजी ने कुल्ले करके पिचकारी दे मारी माँ सीता के श्रीमुख पर। परन्तु माँ सीता और श्रीरामजी के चेहरे पर शिकन तक न पड़ी।

शिवजी बोले :

''सीता ! मैंने जल्दबाजी में तेरे मुँह पर कुल्ला कर दिया, गलती हो गयी।''

सीताजी : ''नहीं प्रभु ! यह बालिका आपकी गंगा में स्नान करने नहीं आ पायी थी, आज आपने घर बैठे मुझको गंगास्नान कराने की कृपा की है।''

शिवजी अत्यंत प्रसन्न होकर बोले :

''राम ! तुम तो सम हो ही, लेकिन सीता देवी भी धन्य हैं। माँग लो जो माँगना हो।''

श्रीराम : ''प्रभु ! हम आपसे एक ही वरदान माँगते हैं।''

शिवजी : ''माँगो, संकोच न करो।''

श्रीराम : ''प्रभु ! अयोध्या में आपके ये नागदेवता नहीं चाहिए और भभूत की भी अवधवासियों को जरूरत नहीं है। इन मुण्डों की माला की भी यहाँ आवश्यकता नहीं है, प्रभु !''

शिवजी : ''राम ! तुम संकोच क्यों कर रहे हो ? भूमिका क्यों बना रहे हो ? माँग लो, जो माँगना हो।''

श्रीराम : ''प्रभु ! वाघांबर एवं त्रिशूल की भी यहाँ जरूरत नहीं है। परन्तु यहाँ एक चीज की कमी है, प्रभु !''

शिवजी : ''राम ! माँग लो न ! संकोच न करो।''

श्रीराम : ''प्रभु ! हम आपसे आपको ही माँगते हैं कि आप एक साल तक अयोध्या की व्यासपीठ पर विराजें एवं मेरे अयोध्यावासियों को युग-युगान्तर, कल्प-कल्पान्तर के कथा-प्रसंग सुनाएँ और अवधवासियों का अज्ञान हरें, मंगल करें ताकि उनका मोक्ष का मार्ग खुल जाये, उनका कल्याण हो जाये।''

शिवजी ने श्रीरामजी की बात स्वीकार की और साल भर तक युग-युगान्तर, कल्प-कल्पान्तर की कथा सुनाते रहे एवं श्रीराम तथा अयोध्यावासी श्रोता बनकर श्रवण करते रहे। उस कथा का थोडा-सा हिस्सा अभी तक मौजूद है जिसको 'शिवगीता' कहते हैं।

कितनी दिव्य महिमा है सत्संग की ! भगवान श्रीराम भी वरदान के रूप में सत्संग की माँग करते हैं। शिवजी ने कहा भी है :

गिरिजा संत समागम सम, और न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो, गावहिं बेद पुरान॥

(श्रीरामचरित० उत्तरकाण्ड : १२५ ख)

देश-विदेशों में टी. वी. चैनलों पर पू. बापू के सत्संग-कार्यक्रम

SONY टी. वी. चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' सत्संग-कार्यक्रम सुबह ७-३०. लंदन के समयानुसार सुबह ७-३० यूरोप एवं अफ्रीका में। न्यूयॉर्क के समयानुसार सुबह ७-३० अमेरिका एवं केनेडा में। तदुपरांत, अमेरिका में T. V. Asia चैनल पर इस्टर्न टाईम के मुताबिक सोमवार, बुधवार, शनिवार को सुबह ९ बजे तथा Asian-American Broadcasting Company पर इस्टर्न टाईम के मुताबिक हररोज सुबह ६ बजे एवं सुबह १० बजे। भारत के भाई-बहन विदेशों में रहनेवाले अपने सगे-संबंधी, परिचितों-मित्रों को खबर कर सकते हैं।

तीन महत्त्वपूर्ण सवाल

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

आज के मनुष्य को उसकी दुष्ट इच्छाओं-वासनाओं ने इतना त्रस्त कर रखा है कि वह कदम-कदम पर चिन्ताओं, परेशानियों, समस्याओं एवं दुःखों-कष्टों के थपेड़े खाता रहता है। वह सच्चा जीवन जीने का ढंग ही भूल चुका है। फरियादात्मक वृत्तियों ने उसके विकास को अवरुद्ध कर रखा है। जीने का सच्चा ढंग तो यही है कि परमेश्वर जो दे, उसीमें सन्तुष्ट रहना। जिनके पास लाखों-करोड़ों रूपयों की सम्पत्ति थी, ऐशो-आराम के सभी साधन थे, बड़े-बड़े महल थे वे भी पूर्ण सुखी नहीं हो पाये तो आप उन परिस्थितियों-वस्तुओं की याचना क्यों करते हो जिनसे आपका जीवन भी दुःखमय बन सकता है ? आज आपके पास जो है, उसीमें संतुष्ट रहना सीखो। आपको जिसकी अत्यन्त आवश्यकता है, उसकी पूर्ति स्वयं भगवान करेंगे। इस नियम को अपने हृदय में बिठा दो।

जिस समय आप जो काम करते हो उसमें अपनी पूरी चेतना लगाओ, दिल लगाओ। टूटे हुए, हताश दिल से काम न करो। पलायनवादिता, लापरवाही से काम करना भूल है। हर कार्य को पूजा, ईश्वर की सेवा समझकर करो।

जो सचमुच में अपने जीवन का महत्त्व समझते हैं वे जिससे अपना कल्याण हो- ऐसा संग करते हैं, ऐसा दिव्य विचार करते हैं।

राजा सुषेण को विचार आया कि : 'मैं जीवन का रहस्य समझनेवाले किसी महात्मा की शरण में जाऊँ। पण्डित लोग मेरे मन का सन्देह दूर नहीं कर सकते।'

राजा सुषेण गाँव के बाहर ठहरे हुए एक वेदान्ती महात्मा के पास पहुँचे। उस समय महात्मा अपनी वाटिका में सेवा कर रहे थे, पेड़-पौधे लगा रहे थे। राजा बोले :

''बाबाजी ! मैं कुछ प्रश्नों का समाधान चाहता हूँ।''

बाबाजी : ''मेरे पास अभी समय नहीं है। मुझे अपनी वाटिका बनानी है।''

राजा ने सोचा कि बाबाजी काम कर रहे हैं और हम चुपचाप बैठें, यह ठीक नहीं। राजा ने भी कुदाली-फावड़ा चलाया।

इतने में ही एक आदमी भागता-भागता आया और आश्रम में शरण लेने को घुसा तथा गिरकर बेहोश हो गया। महात्मा ने उसे उठाया। उसके सिर पर चोट लगी थी। महात्मा ने घाव पोंछा तथा जो कुछ औषधि थी, लगाई। राजा भी उसकी सेवा में लग गया। वह घायल आदमी जब होश में आया तो सामने राजा को देखकर चौंक उठा :

''राजा साहब ! आप मेरी चाकरी में ? मैं क्षमा माँगता हूँ...'' ऐसा कहकर वह रोने लगा। राजा ने पूछा :

''क्यों, क्या बात है ?''

''राजन् ! आप राजदरबार से बाहर एकान्त में गये हैं, ऐसा जानकर मैं आपकी हत्या करने के लिए आपके पीछे पड़ा हुआ था। किन्तु मेरी बात

खुल गई और आपके सैनिकों ने मेरा पीछा किया। मैं जान बचाकर भागा और इधर पहुँचा।''

महात्मा ने राजा से कहा : ''इसे क्षमा कर दो।''

राजा ने आज्ञा शिरोधार्य की। महात्मा ने उस आदमी को दूध पिलाकर रवाना कर दिया। फिर दोनों वार्तालाप करने बैठे। राजा बोले :

''महाराज ! मेरे तीन प्रश्न हैं : सबसे उत्तम समय कौन-सा है ? सबसे बढ़िया काम कौन-सा है और सबसे बढ़िया व्यक्ति कौन है ? ये तीनों प्रश्न मेरे दिमाग में वर्षों से घूम रहे हैं। आपके सिवाय इन प्रश्नों का समाधान करने की क्षमता किसीमें नहीं है। आप पारावारदृष्टि हैं, आप आत्मज्ञानी हैं, आप जीवन्मुक्त हैं। आप कृपा कर समाधान करें।''

महात्मा बोले : ''तुम्हारे प्रश्नों का मैंने सप्रयोग जवाब दे दिया है। फिर भी सुनो : सबसे बढ़िया एवं महत्त्वपूर्ण समय है- वर्त्तमान, जिसमें तुम जी रहे हो। 'इससे भी बढ़िया समय आयेगा तब कुछ करेंगे या बढ़िया समय था तब कुछ कर लेते...' नहीं। अभी जो समय है, वही बढ़िया है।

जिस समय जो व्यक्ति सामने आ जाय, उस समय वह व्यक्ति श्रेष्ठ है ऐसा समझकर उसके साथ व्यवहार करो क्योंकि श्रेष्ठ-में-श्रेष्ठ परमात्मा उसमें है। स्वार्थ की जगह पर स्नेह ले आओ, सहानुभूति और सच्चाई लाओ।

सबसे बढ़िया काम क्या है ? धर्मानुकूल जो कार्य कर रहे हो उस कार्य को ईश्वर की पूजा समझकर बढ़िया-से-बढ़िया ढंग से करो। उस वक्त वही बढ़िया कार्य है।

उत्तम-से-उत्तम व्यक्ति कौन ? जो तुम्हारे सामने हो, प्रत्यक्ष हो, वह सबसे उत्तम व्यक्ति है।''

राजा असमंजस में पड़ गये। बोले :

''बाबाजी ! मैं समझा नहीं।''

तब बाबाजी ने समझाया : ''राजन् ! सबसे महत्त्वपूर्ण समय तो है वर्त्तमान। आज तुमने वर्त्तमान समय का सदुपयोग नहीं किया होता और तुम यहाँ से तुरन्त वापस चल दिये होते तो कुछ अमंगल घटना घट जाती। यहाँ जो आदमी आया था उसका भाई युद्ध में मारा गया था। उसका बदला लेने के लिए वह तुम्हारे पीछे लगा था। मैं काम में लगा था और तुम भी वर्त्तमान समय का सदुपयोग करते हुए मेरे साथ लग गये तो वह संकट की बेला बीत गयी और तुम बच गये।

सबसे बढ़िया काम क्या ? जो सामने आ जाये वही तो सबसे बढ़िया काम है। आज तुम्हारे सामने बगीचे का काम आ गया और तुम भी लग गये। वर्त्तमान को सँवारकर सदुपयोग किया।

सेवाभाव से कार्य करने से तुम्हारा दिल और स्वास्थ्य दोनों सँवरे। पुण्य भी अर्जित किया। इसी कर्म ने तुम्हें दुर्घटना से बचाया।

बढ़िया-से-बढ़िया व्यक्ति वही है जो सामने प्रत्यक्ष हो। उस आदमी के लिए अपने दिल में सद्भाव लाकर सेवा की। प्रत्यक्ष उपस्थित इन्सान के साथ यथायोग्य सद्व्यवहार किया तो उसका हृदय भी परिवर्तित हो गया, तुम्हारे प्रति उसका वैरभाव धुल गया।

इस प्रकार तुम्हारे सामने जो आ जाये वह व्यक्ति बढ़िया है। तुम्हारे सामने शास्त्रानुकूल जो कार्य आ जाये वही उत्तम है और तुम्हारे समक्ष जो वर्त्तमान समय है वही बढ़िया है।''

जिस समय आप जो काम करते हो उसमें अपनी पूरी चेतना लगाओ, दिल लगाओ। टूटे हुए, हताश दिल से काम न करो। लापरवाही, पलायनवादिता से काम करना भूल है। हर कार्य को पूजा, ईश्वर की सेवा समझकर करो। आज होता क्या है ? हम हर कार्य को टालने की वृत्ति से करते हैं, अनमने होकर करते हैं तभी तो मन में प्रसन्नता नहीं आती। नहीं तो मन से काम करें और

हृदय न खिले तो... धिक्कार है ऐसे कार्य को !

यदि कार्य करते-करते आप ईश्वर-नाम जपते जायें, प्रभु का कीर्तन करते जायें, गुरुमंत्र जपते जायें तो फिर सोने पर सुहागा मानो। मंत्रजाप से कार्य में कितना लाभ होगा ? यह वाणी का विषय नहीं है। इससे आपका सतत चिन्तन आरंभ हो जाएगा और जिस क्षण आपका सतत चिन्तन आरंभ हो जाएगा, उसी क्षण आपके सारे कार्य पूर्ण हो जाएँगे क्योंकि यह स्वयं भगवान का वचन है :

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

'हे अर्जुन ! जो पुरुष मुझमें अनन्य-चित्त होकर सदा ही निरन्तर मुझ पुरुषोत्तम को स्मरण करता है, उस नित्य-निरन्तर मुझमें युक्त हुए योगी के लिये मैं सुलभ हूँ।' (गीता : ८.१४)

हनुमानजी, जाम्बवन्त और अन्य वानर युद्ध करते थे तो रामजी की आराधना समझकर। आप जिस समय जो काम करो, उसमें रम जाओ, उसमें पूर्ण रूप से एकाग्र हो जाओ। काम करने का भी आनंद आयेगा और परिणाम भी बढ़िया होगा। कम-से-कम समय लगे और अधिक-से-अधिक सुन्दर परिणाम मिले, ऐसा कार्य करो। ये उत्तम कर्त्ता के लक्षण हैं।

जिस समय जो व्यक्ति सामने आ जाय, उस समय वह व्यक्ति श्रेष्ठ है ऐसा समझकर उसके साथ व्यवहार करो क्योंकि श्रेष्ठ-में-श्रेष्ठ परमात्मा उसमें है। स्वार्थ की जगह पर स्नेह ले आओ, सहानुभूति और सच्चाई लाओ। फिर आपका सर्वांगीण विकास होगा और आपमें सत्संग का प्रसाद स्थिर होने लगेगा।

यही तो है व्यावहारिक वेदान्त।

जब करो जो भी करो अर्पण करो भगवान को।
सदा कर दो समर्पण तुम त्याग कर अभिमान को॥
मुक्ति का आनंद अनुभव सर्वदा क्यों खो रहे हो ?
अजन्मा है अमर आत्मा क्यों भय में जीवन खो रहे हो ?
क्यों व्यर्थ चिंतित हो रहे हो ?

*

विद्या वही जो मुक्त करे

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कथाएँ तो अनेकों लोग सुना सकते हैं किन्तु कथाओं का सार, दृष्टान्तों का सार तो विवेकीजन ही सुना पाते हैं। दृष्टान्तों के सिद्धान्त भाग को समझकर, आत्मारामी होनेवाले संत तो और भी दुर्लभ होते हैं।

काशी पण्डितों का गढ़ है। वैदिक काल में वहाँ पर शास्त्रार्थ होते थे एवं उसमें जिसका सिद्धान्त सर्वोपरि मान्य हो, उसे सर्वश्रेष्ठ पंडित के रूप में जानते थे। उस वक्त के युवानों में शास्त्रार्थ करने का उत्साह रहता था। शास्त्रों का अध्ययन पूरा करके युवा विद्यार्थी शास्त्रार्थ करने निकल पड़ते थे। ऐसा ही एक प्रकाण्ड पंडित शास्त्रार्थ करके कइयों को परास्त कर चुका था। शास्त्रार्थ करते-करते उसे खबर मिली कि : 'काशी में केवल एक साधु को परास्त करने से पूरा काशी जीता जा सकता है। वे साधु बाबा खास पढ़े-लिखे तो नहीं हैं किन्तु उनके श्रीचरणों में अनेकों लोग आते हैं एवं उन्हें अपना गुरु मानते हैं। यदि उन साधु महाराज को जीत लिया तो दिग्विजयी होने का खिताब मिल जायेगा।'

वह प्रकाण्ड पंडित काशी में उन साधु बाबा के पास जाकर बोला :

''महाराज ! मेरे साथ शास्त्रार्थ कीजिए।''

महाराज : ''भाई ! हम तो अनपढ़ आदमी हैं। दो-चार किताबें ही पढ़ी हैं। हम क्या जानें शास्त्रार्थ करना ?''

पंडित : ''तो महाराज ! यहाँ अपने हस्ताक्षर कर दीजिए कि आप हार गये।''

महाराज : ''ठीक है। लाओ, चार बार लिख दूँ।''

ज्यों-ही महाराज लिखने को उद्यत हुए तो चेलों ने कहा :

''महाराजजी ! आप तो हैं ब्रह्मज्ञानी। आपके लिए लाभ-हानि, जय-पराजय, यश-अपयश, ये सब सपना है किन्तु हमारे पास तो कुटुम्ब, पुत्र-परिवारादि हैं। हमारे लिए तो इज्जत का सवाल है। समाजवाले हमें यही ताने सुनायेंगे कि 'हारे हुए गुरु का चेला है।' अतः कृपा करके आप हमारे लिए ही सही, हस्ताक्षर मत कीजिए।''

लोगों की प्रार्थना सुन गुरुजी ने कहा :

''हस्ताक्षर नहीं करेंगे तो शास्त्रार्थ करना पड़ेगा।''

लोग : ''महाराज ! शास्त्रार्थ कर लेना।''

'हाँ-ना' करते-करते गुरु महाराज ने शास्त्रार्थ करना स्वीकार कर लिया।

तारीख तय हो गयी। २० दिन की अवधि के बाद शास्त्रार्थ का कार्यक्रम रखा गया। काशी में दो मंच बन गये। गाँव-गाँव में खबर फैल गयी कि 'गुरु महाराज एवं दिग्विजय को निकले हुए एक प्रकाण्ड पंडित के बीच शास्त्रार्थ होगा।'

उस पंडित ने तो पहले से ही कई शास्त्र पढ़ रखे थे। बैलगाड़ी भरकर और भी शास्त्र पढ़ लिये। एक-एक पोथी छान मारी। जब शास्त्रार्थ का समय हुआ तब वह मंच की ओर निकला। उधर चेलों ने गुरु महाराज से कहा : ''गुरुदेव ! आज शास्त्रार्थ का दिन है।''

साधु बाबा : ''अच्छा... आज शास्त्रार्थ का दिन है ? ठीक है।''

गुरुदेव ने स्नान किया और घोड़ागाड़ी पर बैठकर वे भी मंच की ओर निकल पड़े।

कथाएँ तो अनेकों लोग सुना सकते हैं किन्तु कथाओं का सार, दृष्टान्तों का सार तो विवेकीजन ही सुना पाते हैं। दृष्टान्तों के सिद्धान्त भाग को समझकर, आत्मारामी होनेवाले संत तो और भी दुर्लभ होते हैं।

रास्ते में चप्पल सीनेवाला एक मोची दिखा। गुरुदेव ने गाड़ी खड़ी करवाकर उस मोची से कहा :

''भइया ! तुम कितना कमाते हो ?''

मोची : ''महाराज ! ४-५ रूपये रोज कमा लेता हूँ।''

गुरुजी : ''भइया ! आ जा, घोड़ागाड़ी में बैठ जा। मैं तुझे आज १० रूपये दिला दूँगा।''

मोची को गाड़ी में बैठा लिया। शास्त्रार्थ स्थल पर पहुँचकर जब वे मंच की ओर बढ़ने लगे तो शहनाइयाँ-बाजे आदि बज उठे। हजारों की संख्या में एकत्रित लोगों ने जयघोष किया। बाबाजी को पुष्पमाला अर्पित की गयी। बाबाजी ने वह माला अपने गले में न डालकर मोची के गले में डाल दी और मोची को पकड़कर अपने मंच पर बैठा दिया और उसे स्वयं दंडवत् करके कहने लगे :

''हे प्रभु ! हे परब्रह्म परमात्मा ! हे प्राणिमात्र के रोम-रोम में रमनेवाले आत्मा ! तुम्हें मेरा प्रणाम है।''

मोची हड़बड़ाकर बोला : ''बाबा ! यह क्या कर रहे हैं ?''

बाबा : ''आप तो आत्मा हैं, सर्वव्यापक हैं। आपको मेरा प्रणाम है।''

मोची : ''बाबा ! आप यह क्या कह रहे हैं ? क्यों मेरे सिर पर पाप चढ़ा रहे हैं ?''

बाबा : ''नहीं नहीं, आप तो सच्चिदानंद हैं।''

मोची : ''बाबा ! दस भी नहीं चाहिए, १५ भी नहीं चाहिए। आप मेरे पर पाप मत चढ़ायें, मुझे जाने दें।''

बाबा : ''अरे, रुको। आप तो अमर आत्मा, आदि नारायण हो।''

मोची : ''नहीं नहीं, बाबाजी ! मैं तो जन्मने-मरनेवाला जीव हूँ। मैं तो सुखी-दुःखी होनेवाला संसारी आदमी हूँ। भगवान की माया से सृष्टि चलती है। मैं तो जीव हूँ। मुझे जाने दो।''

तब साधु बाबा ने उस विद्वान् पंडित से पूछा : ''तेरा सिद्धांत क्या है ?''

पंडित : ''मेरा सिद्धान्त है कि हम सब जीव हैं और भगवान की माया से सब काम चल रहा है।''

बाबा : ''तू २५ साल पढ़कर केवल उतना ही जानता है, जितना यह अनपढ़ मोची जानता है। तू जिस सिद्धान्त की बात कर रहा है वह सिद्धान्त तो यह चप्पल सीनेवाला मोची भी बता रहा है कि 'मैं जीव हूँ... जन्मने-मरनेवाला हूँ।' अगर तू इतना ही जानता है तो तेरे शास्त्र-पठन का लाभ क्या ? तेरी विद्वत्ता का मतलब क्या ? तेरी विद्या का उपयोग यदि तत्त्वज्ञान को पाने के लिए नहीं हुआ तो क्या लाभ ? विद्या तो वही जो मुक्ति दिला दे। **सा विद्या या विमुक्तये।**''

उस पंडित को अपनी भूल का एहसास हुआ। वह मंच से तुरंत उतरकर साधु महाराज के चरणों में गिर पड़ा। सारी सभा साधु महाराज का जय-जयकार कर उठी।

कैसे अलबेले होते हैं ब्रह्मवेत्ता महापुरुष !

किसी भी प्रसंग को मन में लाकर हर्ष-शोक के वशीभूत नहीं होना। 'मैं अजर हूँ। मैं अमर हूँ। मेरा जन्म नहीं। मेरी मृत्यु नहीं। मैं निर्लिप्त आत्मा हूँ।' यह भाव दृढ़ता से हृदय में धारण करके जीवन जियो। इसी भाव का निरन्तर सेवन करो। इसी में सदा तल्लीन रहो।

अथाह शक्ति की धनी : तपस्विनी शाण्डालिनी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

शाण्डालिनी का रूप-लावण्य और सौन्दर्य देखकर गालव ऋषि और गरुड़जी मोहित हो गये। 'ऐसी सुन्दरी और इतनी तेजस्विनी ! वह भी धरती पर तपस्यारत ! यह स्त्री तो भगवान विष्णु की भार्या होने के योग्य है...' ऐसा सोचकर उन्होंने शाण्डालिनी के आगे वह प्रस्ताव रखा।

शाण्डालिनी : ''नहीं नहीं, मुझे तो ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना है।''

यह कहकर शाण्डालिनी पुनः तपस्यारत हो गयी और अपने शुद्ध-बुद्ध स्वरूप की ओर यात्रा करने लगी।

गालवजी और गरुड़जी यह देखकर पुनः विचारने लगे कि : 'अप्सराओं को भी मात कर देनेवाले सौन्दर्य की स्वामिनी यह शाण्डालिनी अगर तपस्या में ही रत रही तो जोगन बन जायेगी और हम लोगों की बात मानेगी नहीं। अतः इसे अभी उठाकर ले चलें और भगवान विष्णु के साथ जबरन इसकी शादी करवा दें।'

एक प्रभात को दोनों आये शाण्डालिनी को ले जाने के लिए। शाण्डालिनी की दृष्टि जैसे ही

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

उन दोनों पर पड़ी तो वह समझ गयी कि : 'अपने लिए तो नहीं, किन्तु अपनी इच्छा पूरी करने के लिए इनकी नीयत बुरी हुई है । जब मेरी कोई इच्छा नहीं है तो मैं किसीकी इच्छा के आगे क्यों दबूँ ? मुझे तो ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना है किन्तु ये दोनों मुझे जबरन गृहस्थी में घसीटना चाहते हैं। मुझे विष्णु की पत्नी नहीं बनना, वरन् मुझे तो अपने स्व-स्वभाव को पाना है ।'

गरुड़जी तो बलवान थे ही, गालवजी भी कम नहीं थे । किन्तु शाण्डालिनी की निःस्वार्थ सेवा, निःस्वार्थ परमात्मा में विश्रान्ति की यात्रा ने उसको इतना तो सामर्थ्यवान् बना दिया था कि उसके द्वारा पानी के छींटे मारकर यह कहते ही कि 'गालव ! तुम गल जाओ और गालव को सहयोग देनेवाले गरुड़ ! तुम भी गल जाओ ।' दोनों को महसूस होने लगा कि उनकी शक्ति क्षीण हो रही है । दोनों भीतर-ही-भीतर गलने लगे ।

फिर दोनों ने बड़ा प्रायश्चित किया और क्षमायाचना की, तब भारत की उस दिव्य कन्या शाण्डालिनी ने उन्हें माफ किया और पूर्ववत् कर दिया । उसीके तप के प्रभाव से गलतेश्वर तीर्थ बना है ।

हे भारत की देवियों ! उठो... जागो । अपनी आर्य नारियों की महानता को, अपने अतीत के गौरव को याद करो । तुममें अथाह सामर्थ्य है, उसे पहचानो । सत्संग, जप, परमात्म-ध्यान से अपनी छुपी हुई शक्तियों को जाग्रत करो ।

जीवनशक्ति का ह्रास करनेवाली पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण से बचकर तन-मन को दूषित करनेवाली फैशनपरस्ती एवं विलासिता से बचकर अपने जीवन को जीवनदाता के पथ पर अग्रसर करो । अगर ऐसा कर सको तो वह दिन दूर नहीं, जब विश्व तुम्हारे दिव्य चरित्र का गान कर अपने को कृतार्थ मानेगा ।

*

वास्तव में बड़ा कौन ?

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मनुष्य जाति को बड़े-से-बड़ा लाभ हुआ है तो बुद्ध पुरुषों से हुआ है । बुद्धुओं के द्वारा तो लाभ होना संभव ही नहीं है । जिन्हें हम बुद्धिमान् कहते हैं उन लोगों के द्वारा भी जो लाभ होता है वह लाभ शरीर-इन्द्रियों को सुख-सुविधा देनेवाला और संसार में फँसानेवाला होता है और आज कल तो उन लोगों के द्वारा केवल मनुष्य जाति की ही नहीं, वरन् पूरी सृष्टि की हानि हो, ऐसे काम हुए हैं । जबकि बुद्ध पुरुषों के द्वारा मनुष्य जाति का सचमुच में कल्याण हुआ है, संसारसागर से पार कराने का काम हुआ है । फँसानेवाले से पार करानेवाला श्रेष्ठ होता है ।

काशी विश्वविद्यालय में गामा पहलवान का सम्मान-कार्यक्रम रखा गया था । वहाँ एकत्रित विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए उद्घोषक ने कहा : ''प्यारे मित्रों ! हमारे बीच गामा पहलवान पधार चुके हैं । उनके जीवन से सीख लेकर हमें भी गामा पहलवान जैसा बनना चाहिए...''

उस समय महामना पंडित मदनमोहन मालवीयजी के सत्कर्मों की सुवास चहुँ ओर फैली हुई थी । कार्यक्रम में जब गामा पहलवान को उद्बोधन देने के लिए कहा गया, तब गामा पहलवान ने कहा :

''मेरे प्यारे विद्यार्थी मित्रों एवं शिक्षक

बन्धुओं ! मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ कि आप मेरे जैसे बनें। जो दूसरों को गिराकर, पछाड़कर बड़ा बना है, वह वास्तव में बड़ा नहीं है। बड़े तो महामना मदनमोहन मालवीयजी हैं जो दूसरों को ऊँचा उठाने में लगे हैं फिर भी बड़ा बनने का दावा नहीं करते हैं। आपको भी उनके जीवन से सीख लेकर सत्कर्म एवं सदाचार का जीवन जीना चाहिए। संयमी रहकर अन्तर्मुख बनना चाहिए। गामा पहलवान बनने में कोई सार नहीं है। सार तो है सत्पुरुषों की वाणी में, उनके जीवन में, जिनसे प्रेरणा पाकर मनुष्य अपना जीवन वास्तव में उन्नत कर सकता है।''

युवा पीढ़ी की सुरक्षा

आयुस्तेजो बलं वीर्यं प्रज्ञा श्रीश्च महद्यशः।
पुण्यं च प्रीतिमत्वं च हन्यतेऽब्रह्मचर्यया ॥

'आयु, तेज, बल, वीर्य, बुद्धि, लक्ष्मी, कीर्ति, यश तथा पुण्य और प्रीति ये सब ब्रह्मचर्य का पालन न करने से नष्ट हो जाते हैं।'

गलत बातें सोचकर तथा सिनेमाओं के कुप्रभावों का शिकार होकर युवा पीढ़ी जीते-जी नर्क का दुःख भोगने पर विवश हो रही है। इसलिए एक अच्छे संसार के निर्माण हेतु हमें इन सभी व्यसनों को त्याग देना चाहिए। इस बारे में सरकार और जनता दोनों को मिलकर एक नया रास्ता निकालना होगा कि वे युवा पीढ़ी को इस जाल से कैसे बचा सकते हैं। कुछ बातें युवाओं को स्वयं भी सोचनी चाहिए। यह समय उनके लिए चलचित्रों के प्रभाव में पड़ने का नहीं अपितु महाभारत में जनकजी ने जो कहा है, वह करने का है।

जनकजी शुकदेवजी से कहते हैं :

तपसा गुरुवृत्त्या च ब्रह्मचर्येण वा विभो।

'बाल्यावस्था में विद्यार्थी को तपस्या, गुरु की सेवा, ब्रह्मचर्य का पालन एवं वेदाध्ययन करना चाहिए।'

- महाभारत

सब रोगों का मूल : प्रज्ञापराध

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

'चरक संहिता' के शारीर-स्थान में आया हुआ एक श्लोक ऐसा है, जो आध्यात्मिकता की सीमा को भी मानो, पार कर जाता है :

धीधृतिस्मृतिविभ्रष्टः कर्म यत्कुरुते अशुभम्।
प्रज्ञापराधं तं विद्यात् सर्वदोषप्रकोपणम् ॥

धी, धृति एवं स्मृति यानी बुद्धि, धैर्य और यादशक्ति- इन तीनों को भ्रष्ट करके अर्थात् इनकी अवहेलना करके जो व्यक्ति शारीरिक अथवा मानसिक अशुभ कार्यों को करता है, भूलें करता है उसे प्रज्ञापराध या बुद्धि का अपराध (अंतःकरण की अवहेलना) कहा जाता है, जो कि सर्वदोष अर्थात् वायु, पित्त एवं कफ को कुपित करनेवाला है।

आयुर्वेद की दृष्टि से ये कुपित त्रिदोष ही तन-मन के तमाम रोगों के कारण हैं।

उदाहरणार्थ : रात्रि-जागरण करने अथवा रूखा-सूखा एवं ठण्डा खाना खाने से वायु प्रकोप होता है। अब जिस व्यक्ति को यह बात समझ में आ गयी हो कि उसके वायु रोग- गैस, कब्जियत, सिरदर्द अथवा पेटदर्द आदि का कारण रात्रि-जागरण है, चने, सेम, चावल, जामुन एवं आलू जैसा आहार है, फिर भी वह व्यक्ति मन पर अथवा स्वाद पर नियंत्रण न रख पाने के कारण

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

वैसा करने की गलती करता है तब उसका अंतःकरण उसे वैसा करने से मना भी करता है। उसकी बुद्धि भी उसे उदाहरणों-दलीलों से समझाने का प्रयास करती है। धैर्य उसे वैसा करने से रोकता है और स्मरणशक्ति उसे याद दिलाती है, फिर भी वह गलती करता है तो यह **प्रज्ञापराध** कहलाता है।

तीखा खाने से जलन होती हो, सुजाक हुआ हो, धूप में घूमने से एसिडिटी के कारण सिर दुखता हो, क्रोध करने से ब्लडप्रेशर बढ़ जाता हो- यह जानने के बाद भी जो व्यक्ति अपनी बुद्धि, धृति और स्मृति की अवहेलना करे तो उसे पित्त के शारीरिक अथवा रजोगुणजन्य मानसिक रोग होंगे।

इसी प्रकार घी, दूध, शक्कर, गुड़, गन्ना अथवा केला आदि खाने से या दिन में सोने से सर्दी अथवा कफ होता हो, मीठा खाने से डायबिटिज बढ़ जाता हो, नमक, दूध, दही या गुड़ खाने से त्वचा के रोग बढ़ जाते हों फिर भी स्वाद लोलुपतावश लोभी व्यक्ति मन पर नियंत्रण न रख सके तो उसे कफ के रोग एवं तमोगुणजन्य रोग आलस्य, अनिद्रा, प्रमाद वगैरह होंगे ही।

अंतःकरण अथवा अंतरात्मा की आवाज प्रत्येक व्यक्ति को थोड़ी-बहुत सुनायी देती ही है। छोटे बच्चे भी पेट भर जाने पर एक घूँट दूध पीने में भी आनाकानी करते हैं। पशु भी पेट भर जाने के बाद अथवा बीमारी में पानी तक नहीं पीते। जबकि मनुष्य जैसे-जैसे समझ बढ़ती है, उम्र बढ़ती है वैसे-वैसे ज्यादा प्रज्ञापराध करता नजर आता है। आहार-विहार के प्रत्येक मामले में जागृत रहकर, प्रज्ञापराध न होने देने की आदत डाली जाये तो मनुष्यमात्र आधि-व्याधि एवं उपाधि को निमंत्रण देना बंद करके, संपूर्ण स्वास्थ्य, सुख एवं शांति को प्राप्त कर सकता है।

*

डगमगाता विश्वास सँभाला

दिनांक : ७-१-'९९ के दिन उत्तर प्रदेश न्यायिक सेवा (सिविल जज) पद के लिए साक्षात्कार हेतु चौथी एवं अन्तिम बार मैं लोकसेवा आयोग, इलाहाबाद में सुबह से उपस्थित था। पूर्व की असफलताओं के कारण मन में भय एवं घबराहट का मिश्रण था। अपराह्न ३ बजे जब साक्षात्कार-कक्ष के बाहर बैठाया गया तो हृदय और अधिक विचलित हो उठा। अनायास ही दीवार की ओर दृष्टिगत होते हुए पूज्य बापू मेरे दृष्टिपटल पर कौंध गये और मैंने तुरन्त 'हरि ॐ...' का उच्चारण प्रारम्भ कर दिया। कुछ क्षणों के उपरान्त ही भय एवं घबराहट दूर हो गयी और स्वयं में असीम शक्ति का संचार प्रतीत हुआ। साक्षात्कार के समय मन प्रफुल्लित रहा।

दिनांक : १२-१-'९९ प्रातः ७-३० बजे मुझे किसीने बताया कि सफल अभ्यर्थियों की सूची में मेरा अनुक्रमांक नहीं है। मेरी आँखों के आगे अन्धकार-सा छा गया किन्तु कुछ क्षण बाद ही सामने मेज पर रखी 'ऋषि प्रसाद' के कवर पेज पर पूज्य बापू के चित्र की ओर ध्यान आकृष्ट हुआ। वहाँ पूज्य बापू मेरी ओर इशारा करके न जाने किस कारण मुस्कुरा रहे थे। मैं बुदबुदा उठा कि मुझे इतनी निराशा... और आप मुस्कुरा रहे हैं !

बापू के प्रति मेरी आस्था शायद डगमगाने

जा रही थी कि सुबह ८-१५ बजे मेरे ससुरालवालों ने सिविल जज पद हेतु चयनित होने पर मुझे टेलीफोन पर बधाई दी। मैं अवाक् था। मैंने पुनः उन्हें अपना अनुक्रमांक बताकर पुष्टि कर लेने को कहा। परिणाम ठीक था। मैं सफल था। आँखों से अश्रु बह निकले। मुझे क्षमा करना मेरे साँई ! आप पर मेरा अडिग विश्वास क्यों डगमगाने चला था ? मेरे साँई ! आप तो सभी का ध्यान रखते हैं, फिर मुझे ही कैसे भूल जाते ? बापू को शत-शत नमन !

- राजीव कुमार गुप्ता
(चयनित सिविल जज)
उत्तर प्रदेश न्यायिक सेवा परीक्षा।

योग वेदान्त शक्तिपात-वर्षा के दाता पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के श्रीचरणों में कोटि-कोटि वंदन !

पूज्य बापू के दर्शनमात्र से लोगों में आध्यात्मिक उन्नति के लिए एक प्रबल प्रवृत्ति जागृत होती है। इस धरती पर आध्यात्मिक योगक्रांति के लिए हमारे राष्ट्र को पूज्यश्री एक ईश्वरीय अंश के स्वरूप में प्राप्त हुए हैं।

सन् १९९६ से हमारे क्षेत्र में पूज्य बापू के सत्संग से धर्मजागृति की एक प्रचंड लहर दौड़ गयी है। मुझे पूज्य बापू के सान्निध्य का अनुभव है कि वे हजारों-हजारों लोगों को कीर्तन एवं ध्यान की गहराइयों में घण्टों तक ले जाकर कुदरत के दैवी गूढ़ रहस्यों का अनुभव कराते हैं।

वास्तव में ब्रह्मानंद में मस्त, अलख के औलिया, लाखों के तारणहार पूज्य गुरुदेव के चरणकमलों में कोटि-कोटि वंदन...

- नगरसिंहजी पसाया
विधायक,
११५, लीमखेड़ा, मु. राछवा, ता. धानपुर, जि. दाहोद (गुज.).

आनन्द से ही सबकी उत्पत्ति, आनन्द में ही सबकी स्थिति एवं आनन्द में ही सबकी लीनता देखने से आनन्द की पूर्णता का अनुभव होता है।

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

गौमाता : दुःख-दारिद्र्यहारिणी

[गतांक का शेष]

यजुर्वेद के अनुसार :

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमं सरः ।
इन्द्र पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते ॥

'जिस ब्रह्मविद्या द्वारा मनुष्य परम सुख को प्राप्त करता है, उसकी उपमा सूर्य से दी जा सकती है । उसी प्रकार द्युलोक की समुद्र से तथा विस्तीर्ण पृथ्वी की इन्द्र से उपमा दी जा सकती है, किन्तु प्राणिमात्र के अनंत उपकारों को अकेली संपन्न करनेवाली गौमाता की उपमा किसीसे नहीं दी जा सकती है ।' (यजुर्वेद : २३. ४८)

जिस व्यक्ति पर माँ लक्ष्मी की कृपा हो जाए उसे दुःख-दारिद्र्य से छुटकारा मिल जाता है तथा धन-वैभव के कारण उसकी यश-कीर्ति बढ़ती है । गौमाता को भी वेद-पुराणों में लक्ष्मीस्वरूपा ही कहा गया है । लक्ष्मी की सेवा-भक्ति से मनुष्य को धन तो मिल जाता है परंतु कभी-कभी धन-संपदा के मद में चूर व्यक्ति बुद्धि-विवेक खो बैठता है, जिससे उसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह जैसे शत्रु बढ़ते जाते हैं । ऐसे व्यक्ति का शीघ्र ही विनाश हो जाता है । उसे इहलोक में अपयश मिलता है तथा परलोक में वह नरकगामी होता है । इसके विपरीत गौसेवक लक्ष्मीजी के साथ-साथ ३३ करोड़ देवताओं की पूजा करता है, जिससे उसकी बुद्धि का विकास होता है । उसके शत्रु परास्त होते हैं । इस लोक में वह धन-वैभव और यश का लाभ लेता है तथा परलोक में जाकर गोलोक धाम में निवास करता है । गौमाता अपने सेवक को धन-संपदा, बल-बुद्धि तथा यश-कीर्ति से परिपूर्ण रखती हैं और दरिद्रता, भूत-प्रेत, चोर तथा यमदूतों से सुरक्षित रखती हैं ।

ये बातें कुछ भावनात्मक जरूर हैं परंतु भावनात्मक जुड़ाव होना कोई बुरी बात नहीं है । किसी वस्तु से जब तक भावनात्मक जुड़ाव न हो, तब तक उसमें श्रद्धा नहीं हो पाती है । जैसे मन्दिर में स्थापित मूर्ति में धार्मिक व्यक्ति की श्रद्धा है । झण्डे में देशवासियों की श्रद्धा है । हिंदुओं में गौमाता के प्रति जो श्रद्धा है, वह अन्य किसी पशु-पक्षी के प्रति नहीं है ।

भावनात्मकता के अतिरिक्त गोपालन एक ऐसा धन्धा भी है जो आज अधिकांश गरीबों की रोजी-रोटी का सहारा बना हुआ है । गोवंश गरीब-से-गरीब व्यक्ति के जीने का सहारा है तथा आज से नहीं, सदियों से देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ बना हुआ है ।

यदि एक परिवार के स्तर पर गोपालन का विवेचन करें तो ४-५ लिटर दूध देनेवाली एक गाय ४ व्यक्तियोंवाले एक साधारण परिवार की सारी आवश्यकताएँ पूरी कर देती है । इससे दूध, घी, दही, मट्ठा आदि भरपूर मात्रा में मिल जाते हैं । साथ ही, गोबर से ईंधन की दैनिक आवश्यकता की पूर्ति भी हो जाती है । साल में एक बछिया या बछड़ा भी मिल जाता है । (क्रमशः)

ऋषि प्रसाद

हिमालय की गुफाओं में,
ऋषियों ने जप-तप ध्यान लगाया है।
मेरे गुरुवर के हृदय में,
'ऋषि प्रसाद' धड़कन बन समाया है ॥
इन्हीं धड़कनों से आज,
यह आवाज आई है।
हुआ सुखी स्वस्थ सम्मानित,
जिसने लौ 'ऋषि प्रसाद' से लगाई है ॥
दे-देकर देशी दवा-ज्ञान,
सिखलाकर योग और प्राणायाम,
रहना स्वस्थ बताया है।
ऑपरेशन के अभिशाप से,
बचना हमें सिखाया है ॥
श्री लीलाजी की स्वप्न-गठरिया,
अपने शीश उठाया है।
कर साकार जिसे गुरुवर ने,
जन-जन तक पहुँचाया है ॥
जहाँ नहीं पहुँचा 'ऋषि प्रसाद',
जाकर वहाँ पहुँचाना है।
गुरुदेव के दैवी कार्य को...
'ऋषि प्रसाद' के दैवी कार्य को,
मिल सबको सफल बनाना है ॥

- सुरेश कपूर, दिल्ली।

सूरत : सूरत आश्रम में दिनांक : २५ से २७ फरवरी तक योग और वेदांत के अनुभवनिष्ठ सत्पुरुष पूज्यपाद बापू के पावन प्रेरक सान्निध्य में विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर का आयोजन हुआ जिसमें योगासन, प्राणायाम के अलावा ध्यानयोग की विभिन्न पद्धतियों से विद्यार्थियों की सुषुप्त शक्तियों को जागृत करने व यादशक्ति बढ़ाने के प्रयोग कराये गये। देश के विभिन्न प्रान्तों से आए हुए हजारों विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास के लिए अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन कर विजेता विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया। उन्हें **'ऋषि प्रसाद'** की निःशुल्क वार्षिक सदस्यता एवं घड़ी भी भेंटस्वरूप दी गई। आश्रम के प्राकृतिक वातावरण और पूज्यश्री के प्रेमयुक्त अनुशासन में विद्यार्थीगण प्रसन्न व प्रफुल्लित दिखाई दे रहे थे।

पूज्यश्री की अमृतवाणीरूप सत्संग-वाटिका से विद्यार्थियों के लिए संकलित कुछ पुष्प :

* विद्यार्थी जीवन बड़ा कीमती है, आपके सम्पूर्ण जीवन की नींव है। आलस्य-प्रमाद में समय न गँवाकर अपने अमूल्य समय-शक्ति का उपयोग सार्थक कर्म में करो।

* बाल्यकाल में सुसंस्कारों को विद्यार्थी जितनी तत्परता से अपने आचरण में लायेगा, वह उतना ही महान् होगा।

* ध्यान करने से सुषुप्त शक्तियाँ जागृत होती हैं। नियमित रूप से ध्यान करनेवाला व्यक्ति देर-सबेर इच्छित पंद को प्राप्त कर लेता है।

* छोटी-सी लापरवाही बड़ी मुश्किलें ले आती है। हमेशा सजग रहो। अपनी लापरवाही को

- पूज्यापाद संत श्री आसारामजी बापू

स्वयं जानकर उसे निकालने का प्रयत्न करो।

❋ जिन विद्यार्थियों को किशोरावस्था में महापुरुषों का मार्गदर्शन मिल जाता है, युवावस्था में विवेक-वैराग्य आ जाता है वे बड़े भाग्यशाली होते हैं। जो मन को नियंत्रित कर उसे सही रास्ते पर ला सकता है, वह दुनिया के हर क्षेत्र में सफल हो सकता है।

❋ जिसके जीवन में गीता, उपनिषद् व सद्गुरु-प्रदत्त ज्ञान का आदर है, उनके उपदेशानुसार जिनका आचरण है वह अपने जीवन में सफल होता है।

विद्यार्थी शिविर की पूर्णाहुति होते ही आत्मा-परमात्मा के ध्यान में निहाल कर देनेवाले शक्तिपात साधना शिविर का शुभारंभ हुआ। होलिकोत्सव के इस शिविर में भारतवर्ष के दूर-सुदूर क्षेत्रों से लाखों-लाखों लोगों का आगमन हुआ। आश्रम का विशाल प्रांगण भी जनमेदनी की भारी संख्या से नन्हा पड़ने लगा था। पूज्यश्री ने केसुड़े के प्राकृतिक फूलों से बने रंगों द्वारा लोगों के कपड़े तो रंगे ही, साथ ही भगवद्-रंग से भी लोगों के दिलों को खूब रंगा। इस फूलडोल उत्सव में उत्साह व आनंद से आह्लादित भक्त-समुदाय ने पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में लौकिक होली के साथ-साथ अलौकिकता का भी आस्वादन किया। विशाल जनमेदनी के समक्ष पूज्यश्री के मुखारविन्द से निःसृत अमृतवाणी में से संकलित कुछ सत्संग-कणिकाएँ यहाँ प्रस्तुत हैं :

❋ ईश्वर के नाते कर्म करने से कर्म में निखार आता है। कर्म के रहस्य को समझनेवाला व्यक्ति कर्मबंधन से मुक्त हो जाता है। परहित की प्रधानता व ईश्वरार्पण बुद्धि से किया गया कर्म बन्धन का कारण नहीं होता। कर्म अपने स्वार्थ के लिए नहीं, बल्कि परहित की प्रधानता से किया जाना चाहिए।

परहित सरिस धरम नहीं भाई।
परपीड़न सम नहीं अधमाई॥

सुख-दुःख को सपना समझकर उसको देखनेवाले साक्षी चैतन्य परमात्मा को ही जो अपना समझते हैं, वे आनंद में रहते हैं।

रजोगुणी, तमोगुणी व्यक्ति मर मिटने की श्रद्धा दिखाता है, पर उसकी श्रद्धा का कोई भरोसा नहीं कि कब वह श्रद्धा निंदकों का रूप ले ले, निगुरों से भी गये बीते हो जाये, कोई ठिकाना नहीं। सत्त्वगुण-संपन्न व्यक्ति ही अडिग रह सकता है।

❋ सद्गुरु के साथ जितनी ईमानदारी व सच्चाई से शिष्य का व्यवहार होता है, उतना ही शिष्य का यश चहुँ ओर विस्तरित होता है। इसलिए :

कपट कबहुँ न कीजिए।
गुरु से कपट मित्र से चोरी।
या हो अंधा या हो कोढ़ी॥

ओंजल (गुज.) में पदयात्रा : दरिया किनारे स्थित संत श्री आसारामजी आश्रम, ओंजल से सैकड़ों साधक मार्ग पर पड़नेवाले विभिन्न गाँवों को हरिकीर्तन से पावन कर सत्साहित्य, आध्यात्मिक समाचार पत्र **'लोक कल्याण सेतु'** व प्रसाद के साथ-साथ मासिक पत्रिका **'ऋषि प्रसाद'** का वितरण करते हुए २८ फरवरी को सूरत आश्रम पहुँचे जहाँ त्रिदिवसीय होलिकोत्सव शिविर में शामिल होकर पूज्यश्री की अमृतवाणी से निःसृत भगवद् रस का पान कर धन्यता का अनुभव किया।

बोईसर (मुंबई) : ९ दिवसीय पदयात्रा के दौरान यहाँ के सैकड़ों समाजसेवी साधकवृंद मार्ग के अनेक गाँवों में विडियो सत्संग, भजन-कीर्तन तथा पूज्य बापू की अमृतवाणी पर आधारित 'मंगलमय जीवन मृत्यु', 'यौवन सुरक्षा', 'योगयात्रा', 'महान नारी' आदि सत्साहित्य बाँटते हुए २८ फरवरी को सूरत आश्रम में आयोजित वेदांत शक्तिपात साधना शिविर में सम्मिलित हुए। उत्साही साधकों ने गद्गद् कंठ से बताया कि : ''मार्ग में लोगों ने जिस आत्मीयता व हृदय से पदयात्रियों का स्वागत किया वह अद्भुत है, अवर्णनीय है, अविस्मरणीय है। पग-पग पर अलौकिक आनंद की अनुभूति हो रही थी। सच ही कहा है :

संत मिलन को जाइये, तजि मोह माया अभिमान।
ज्यों-ज्यों पग आगे धरे, कोटिक यज्ञ समान ॥

❊ विशाल विद्यार्थी संकीर्तन यात्रा ❊

फिरोजाबाद (उ. प्र.) : फिरोजाबाद समिति द्वारा दिनांक : २०-२-'९९ को एक विशाल विद्यार्थी संकीर्तन यात्रा का आयोजन किया गया जिसमें नगर के विभिन्न विद्यालयों के ३००० विद्यार्थियों के अतिरिक्त हजारों श्रद्धालुओं, भाइयों एवं बहनों ने भाग लिया। इस संकीर्तन यात्रा में नगर के मुस्लिम विद्यालय **इस्लामिया इन्टर कालेज** के लगभग ५०० विद्यार्थियों ने भी हिस्सा लिया। ज्ञात हुआ है कि पहली बार आयोजित इस विद्यार्थी संकीर्तन यात्रा से पूरा नगर हरिमय हो गया था तथा नगर के लोग यहाँ पूज्यश्री के आगमन की बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे हैं।

हडियोल (गुज.) : शिक्षित, सेवाभावी व भक्तिप्रधान इस ग्राम में गुरुदेवश्री के पावन सान्निध्य में १२ से १४ मार्च तक गीता भागवत सत्संग समारोह संपन्न हुआ। इसी गाँव के करीब १५५० शिक्षक व अधिकारी पूरे गुजरात में सेवारत हैं जिसमें १३०० शिक्षक व २५० शिक्षण विभाग के कर्मचारी हैं। उन शिक्षक बन्धुओं व जनता-जनार्दन की सत्संग के लिए वर्षों की माँग तथा सत्संग की प्यास पूर्ण हुई।

साबरकाँठा जिले के अतिरिक्त दूर-दूर से लोगों का आगमन हुआ। तीन दिन तक यह ग्राम ज्ञान-भक्तिवर्षा का केन्द्र बना रहा। इस छोटे-से ग्राम में एकत्रित अपार जनसमुदाय से 'मिनी कुंभ' का-सा दृश्य दृष्टिगोचर हो रहा था। यहाँ पूज्यश्री की अमृतवाणी से संकलित कुछ सूत्रात्मक सत्संग कणिकाएँ प्रस्तुत हैं :

❊ धन और सत्ता से दुःख नहीं मिटता। दुःख तो आत्मस्वरूप के ज्ञान से ही मिट सकता है। आत्मस्वरूप का ज्ञान न होना बड़े-में-बड़ा अज्ञान है। बिना सत्संग के अज्ञान निवृत्त नहीं होता है।

❊ सत्संग मनुष्य को त्यागमय, ब्रह्ममय बना देता है।

❊ संसार का कुछ सुनकर, कुछ देखकर जो सुखी होना चाहता है वह भोगी है तथा जो भगवन्नाम व भगवद्भक्ति से प्रसन्न व सुखी होता है, वह योगी है।

❊ रुचिपूर्वक संसार का भोग करने से भवरोग बढ़ता है। बुद्धिपूर्वक संसार का उपयोग करने से भवरोग मिटता है।

❊ कर्म से कर्म को काटो। कर्मबंधन न बनाओ।

❊ सच्चा सुख कभी मिटता नहीं, सांसारिक सुख कभी टिकता नहीं। अतः सच्चे सुख को पाने का प्रेमपूर्वक प्रयास सभी को करना चाहिए।

अमदावाद आश्रम : चेटीचंड महोत्सव पर १९ से २१ मार्च तक आयोजित वेदान्त शक्तिपात साधना शिविर गुरुदेवश्री के पावन सान्निध्य में संपन्न हुआ। आश्रम से मराठी भाषा में प्रकाशित साहित्य **'मंत्रजापाचा महिमा व अनुष्ठान विधी'** तथा **'श्रीआसारामायण'** का विमोचन हुआ। मराठी जगत में इन दोनों साहित्यों की माँग पिछले लंबे समय से की जा रही थी।

देश-विदेश से आए हुए विशाल साधक-समुदाय को कुण्डलिनी योग के समर्थ आचार्य पूज्यपाद बापू ने ज्ञान-भक्ति और योगमार्ग में उन्नति करने के अनेक प्रयोग सिखाये। पूज्यश्री द्वारा किये गये शक्तिपातवर्षा के फलस्वरूप अनेक साधकों ने कुण्डलिनी जागरण के अनुभव किये। अंतिम दिन विदाई के अवसर पर सत्संग-प्रांगण में विशाल संख्या में उपस्थित साधक-साधिकाओं की आँखें भर आयीं। पूज्यश्री का प्रेम व करुणा अवर्णनीय है। जो यहाँ उपस्थित थे, वे ही इसका अनुभव कर सकते हैं। उसका वास्तविक वर्णन करना कागज-कलम की सीमा से पार है।

योगनिष्ठ पूज्यश्री के सूत्रात्मक अमृतवाणी के कुछ अंश यहाँ दिये जा रहे हैं :

❊ सूर्य रोज बाहर का अंधकार मिटाता है,

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

पर अंतर का अंधकार तो सद्गुरु के ज्ञान से ही मिटता है।

❋ इन्द्रिय-ज्योति को प्रकाशित करनेवाली मनःज्योति है, मनःज्योति को प्रकाशित करनेवाली बुद्धि-ज्योति है और बुद्धि ठीक निर्णय कर रही है या नहीं- यह जाननेवाली जीवात्मा-ज्योति है। अंतःकरण से जुड़ा हुआ यह जीव जीने की इच्छा करता है इसीलिए जीवात्मा-ज्योति कहलाता है, अन्यथा वही आत्म-ज्योति है।

❋ जिसकी आत्म-ज्योति जागृत हो गई है, वह शुभ-अशुभ, सुख-दुःख, जन्म-मृत्यु से पार हो जाता है।

❋ शाश्वत परमात्मा को छोड़कर जो कुछ पाओगे वह एक दिन अवश्य छूट जायेगा या तो वह तुम्हें छोड़कर चला जायेगा या तुम उसे छोड़कर चले जाओगे।

❋ इसी जीवन में उस ऊँचाई को पा लो, जिससे फिर पतन का भय न हो।

❋ कुछ बनो मत। यदि बनोगे, तो बिगड़ोगे। तुम जो हो उसे जान लो। तुम शुद्ध, बुद्ध, चैतन्य-स्वरूप अमर आत्मा हो। अपने इस अमरत्व को जान लो।

पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
२८ अप्रैल से २ मई '९९	दिल्ली में	पाँचवाँ विश्वशांति सत्संग समारोह प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३०	सी. बी. डी. ग्राउण्ड, कड़कड़ डूमा कोर्ट के सामने, दिल्ली।	२४६५३०२, २०४६७८३. आश्रम : ५७२९३३८, ५७६४१६१.

पूर्णिमा दर्शन : ३० अप्रैल '९९ दिल्ली में

विद्यार्थियों ने 'हरि ॐ' के पावन नाम से अभिवादन की शैली अपनायी

परम पूज्य सद्गुरुदेव भगवान के श्रीचरणों में कोटि-कोटि नमन !

पूज्यश्री के पावन आशीर्वाद के फलस्वरूप हिसार (हरियाणा) में जय कृष्ण मुरारी हाई स्कूल के सभी छात्र-छात्राएँ प्रातःकालीन प्रार्थना के साथ-साथ लयबद्ध संगीत-ध्वनि के साथ **'हरि ॐ'** का मधुर गुँजन करते हैं। विद्यालय में आते ही सभी विद्यार्थी पहले **'गुडमार्निंग'** बोलते थे किन्तु अब **'हरि ॐ'** के पावन नाम से अभिवादन करते हैं। कक्षा में हाजिरी के समय भी **'यस टीचर'** के स्थान पर **'हरि ॐ'** ही बोलते हैं। स्कूल-समय के पश्चात् घर में भी सभी विद्यार्थी **'हरि ॐ'** कहकर ही सबका अभिवादन करते हैं।

पूज्य गुरुदेव के कृपा-प्रसाद से विद्यार्थियों को योगासन, प्राणायाम, ध्यान कराके उनके जीवन को ओजस्वी व तेजस्वी बनाने में विद्यालय अग्रसर है। पुनः, सच्चे साँई के श्रीचरणों में कोटि-कोटि नमन !

अब प्रभु कृपा करौ एहि भाँति।
सद्गुरु चरणों में प्रीति रहे दिन राति ॥

- जय प्रकाश कौशिक,
'मुख्य अध्यापक'
जय कृष्ण मुरारी हाई स्कूल, कुंज गार्डन, शांति नगर, हिसार (हरियाणा).

❋

ले पिचकारी भर के मारी, अंग अंग पर लागी। हृदय-कमल में ज्योति जगायी, अनहद नाद धुन जागी॥

हे मेरे मन ! हे मेरे मन ! चल सद्गुरु के द्वारे... उथे अमृत बरसे॥ (सूरत में होली महोत्सव)

मोक्षमार्ग के पथिक बनकर, सूरत आश्रम (गुज.) में पूज्यश्री से अमृतवचन सुनकर, हजारों लोगों ने अपने दिव्य जीवन का शुभारंभ किया।

REGISTERED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABAD PSO LICENCE NO. ... gd. No. GAMC/1132. BOMBAY, BYCULLA PSO LI...